ISSN-2321-3981

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

चैत्र-वैशाख २०७७ अप्रैल २०२०

शौर्य एवं बलिदान अंक

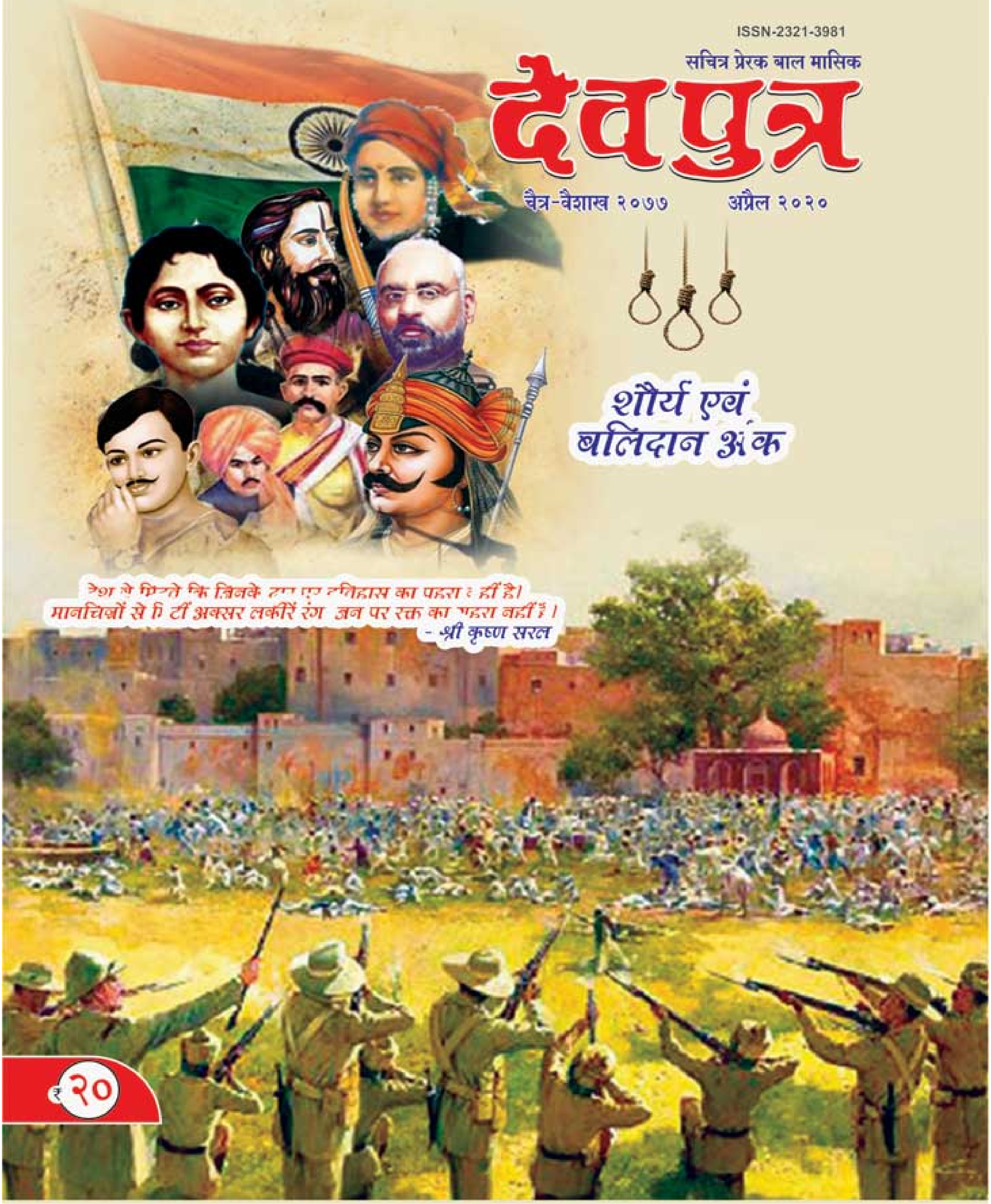

Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

करेंट अफेयर्स

क्रैश कोर्स

प्रारंभिक परीक्षा–2020

हिन्दी माध्यम | ENGLISH MEDIUM

प्रारंभ

27 मार्च — क्लासरूम प्रोग्राम

5 अप्रैल — ऑनलाइन प्रोग्राम

हिन्दी साहित्य

वैकल्पिक विषय (वीडियो क्लासेज़)

द्वारा– डॉ. विकास दिव्यकीर्ति

निःशुल्क परिचर्चा के साथ बैच प्रारंभ

2 अप्रैल

प्रातः 11:30बजे

दृष्टि आई.ए.एस. (दिल्ली)
641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-09
☎ 87501 87501

दृष्टि आई.ए.एस. (प्रयागराज)
ताशकंद मार्ग, निकट पत्रिका चौराहा, सिविल लाइन्स, प्रयागराज
☎ 87501 87501

English Medium (Delhi Branch)
21, PUSA ROAD, KAROL BAGH, NEW DELHI-110005
☎ 9319290696

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

(विद्या भारती से सम्बद्ध)

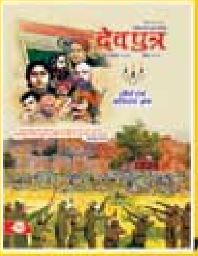

चैत्र-वैशाख अप्रैल	२०७७ २०२०	वर्ष ४० अंक ९

प्रधान संपादक
कृष्ण कुमार अष्ठाना

प्रबंध संपादक
शशिकांत फड़के

संपादक
डॉ. विकास दवे

कार्यकारी संपादक
गोपाल माहेश्वरी

मूल्य

एक अंक	:	२० रुपये
वार्षिक	:	१८० रुपये
त्रैवार्षिक	:	५०० रुपये
पंचवार्षिक	:	७५० रुपये
आजीवन	:	१४०० रुपये
सामूहिक वार्षिक	:	१३० रुपये

(कम से कम १० अंक लेने पर)

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल 'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

संपर्क
४०, संवाद नगर,
इन्दौर ४५२००१ (म. प्र.)
दूरध्वनि: (०७३१) २४००३३९, ४३९

e-mail:
व्यवस्था विभाग
devputraindore@gmail.com
संपादन विभाग
editordevputra@gmail.com

अपनी बात

प्यारे भैया-बहिनो,

यह अंक आपके हाथों में सौंपते हुए कई स्मृतियाँ बार-बार याद आ रही हैं। हम सब घूमने फिरने के बहुत शौकिन होते हैं। इस भ्रमण की स्मृतियाँ भी कई बार भूलाए नहीं भूलतीं।

विद्यालय के बच्चों को लेकर लगभग २५ वर्ष पहले हल्दीघाटी गया था। चेतक के समाधि स्थल पर मैंने बच्चों से पूछा था- ''कभी अपने घर के पालतु प्राणियों को स्टूल, कुर्सी या पलंग से नीचे धकाने का प्रयास करना। क्या कुत्ते, बिल्ली, खरगोश सहजता से उतनी सी ऊँचाई से छलांग लगाने को तैयार होते हैं?'' चेतक उस ऊँची पहाड़ी से छलांग लगाकर स्वयं शहीद हो गया परन्तु महाराणा प्रताप को बचा लिया। तभी तो चेतक का समाधि स्थल हमारा प्रेरणा केन्द्र है, तीर्थ समान है।

*****

इन्दौर के एक इतिहास में रुचि रखने वाले मेडीकल कॉलेज के प्राध्यापक जी ने पूछा - ''आपको पता है अंग्रेजों से संघर्ष करते हुए अपना जीवन राष्ट्र के लिए बलिदान कर देने वाले अमझेरा के राणा बख्तावर सिंह जी को अंग्रेजों ने जिस नीम के पेड़ पर फाँसी पर लटकाया था? वह कहाँ हैं?'' मेरी जिज्ञासा बढ़ने पर उन्होंने जब वह बलिदान स्थल दिखाया तो आँखें भीग गई। एम.वाय. चिकित्सालय की सीमा में सायकल स्टैण्ड के एक कोने में यह स्थान, यह पेड़ उपेक्षित सा, उजाड़ खडा है। बाद में कुछ राष्ट्रभक्तों ने वहाँ राणा बख्तावर सिंह जी की प्रतिमा लगा दी परन्तु स्थान अब भी उपेक्षित ही है।

*****

शिवपुरी गया तो लोगों से पूछने हुए तात्या टोपे के बलिदान स्थल तक जाना हुआ। नगर पालिक प्रशासन ने आसपास फैंसिंग करके दरवाजे पर ताला जड़ रखा था। पुष्पांजलि तो नहीं चढ़ा पाया परन्तु अंदर घूमते कुत्ते और गन्दगी फैलाते सुअर मन को दु:खी कर रहे थे।

*****

यह अंक आपको कुछ बलिदान गाथाओं से, बलिदान स्थानों से परिचित कराएगा।

बच्चो! ये जीवन्त तीर्थ हैं अपने देश के यदि इनसे हमने प्रेरणा नहीं ली तो श्रीकृष्ण सरल जी के शब्दों में-''वीरता बांझ हो जाएगी''। आओ, नमन करें इन बलिदान तीर्थों को और ढूंढ-ढूंढकर श्रद्धा के साथ दर्शन करने भी जाएँ इन सब स्थानों पर।

आपका
बड़ा भैया

अनुक्रमणिका

• पंजाब का बलिदान तीर्थ : जलियाँवाला बाग	- बासुदेव प्रजापति	०५
• लंदन में प्रतिशोध : ऊधमसिंह का पराक्रम	- श्रीकृष्ण 'सरल'	०९
• लद्दाख की लड़ाई : रणजीत की रणनीति	- मदनलाल बिरमानी	११
• मेवाड़ के दिग्विजयी : बापा रावल	- आनंद मिश्र 'अभय'	१३
• दिल्ली में दिया शीश : हिन्द की चादर	- संकलित	१६
• उड़ीसा का नन्हा नाविक : बाजी राउत	- रविचन्द्र गुप्ता	२१
• कोंकण का सिंह : तानाजी मालुसरे	- बाबूलाल शर्मा	२२
• बुन्देलखण्ड का सपूत : वीरवर छत्रसाल	- रूपसिंह	२४
• गोआ का मुक्ति योद्धा : राजाभाऊ महाकाल	- विकास त्रिपाठी	२५
• कर्नाटक की सिंहनी : कित्तूर की महारानी	- शिवकुमार गोयल	२६
• महाराष्ट्र के क्रांतिवीर : चाफेकर बन्धु	- दिनेश दर्पण	२९
• उत्तर प्रदेश की मर्दानी : लक्ष्मीबाई	- वीर विनायक सावरकर	३०
• आन्ध्र का योद्धा संन्यासी : अल्लूरी सीताराम राजू	- संकलित	३३
• गुजरात का गौरव : पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा	- पं. बाबूलाल जोशी	३६
• मेघालय का जयंतिया वीर : उ कियांग नागवा	- बिपिन बिहारी पाराशर	३८
• बंगाल का बाल बलिदानी : खुदीराम बसु	- पद्मा चौगाँवकर	४१
• मालवा का मृत्युंजयी : चन्द्रशेखर आजाद	- रखबचन्द्र बावेला	४४
• बिहार के वीर विद्यार्थी : सात सपूत	- गोपाल माहेश्वरी	४६
• राजस्थान का रणबांकुरा : प्रताप से एकालाप	- श्यामनारायण पाण्डेय	४८
• केरल का क्रांति कुसुम : राजेन्द्र नीलकंठ	- राजेन्द्र नीलकंठ	५०

क्या आप देवपुत्र का शुल्क नेट बैंकिंग से जमा करा रहे हैं? तो कृपया ध्यान दें!

देवपुत्र का शुल्क इसकी प्रकाशन संस्था - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** के खाते में ही जमा कराएँ।
विवरण इस प्रकार है- खातेदार - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** बैंक - **स्टैट बैंक ऑफ इण्डिया, एम.वाय.एच.परिसर शाखा, इन्दौर** खाता क्रमांक-**38979903189** चालू खाता **(Current Account) IFSC- SBIN0030359** राशि जमा करने के बाद जमा पर्ची को देवपुत्र के ई-मेल **ID devputraindore@gmail.com** पर अवश्य भेजिए। नेट बैंकिंग में प्रेषक के कॉलम में पहले अपना स्थान लिखें फिर **सरस्वती शिशु मंदिर** का संक्षेप लिखें तो सन्देश ठीक आता है। उदाहरण के लिए -सरस्वती शिशु मंदिर, संजीत मार्ग, मंदसौर ने देवपुत्र का शुल्क भेजा तो उन्हें प्रेषक में लिखना चाहिए - "**मन्दसौर संजीत मार्ग SSM**" आशा है सहयोग प्रदान करेंगे।

।। पंजाब का बलिदान तीर्थ।।

जलियांवाला बाग

• वासुदेव प्रजापति

बच्चो! अब से सौ वर्ष पहले भारतीय इतिहास में एक ऐसा खून से भीगा पृष्ठ जुड़ा जिसका गीलापन आज भी हर देशभक्त भारतवासी की आँखों को भिगोता रहता है। इतिहास की वह रक्तरंजित अंग्रेजी दिनांक थी १३ अप्रैल १९१९ उस दिन हमारा बैसाखी का पवित्र दिन था लेकिन अमृतसर की इस घटना पर्व के उल्लास को महाशोक में परिवर्तित कर दिया था।

आप इस विश्वभर में निंदित हत्याकाण्ड के विषय में जानने के पहले इसके मूल कारण बने कुख्यात रोलेट एक्ट के सम्बन्ध में भी जान लीजिए–

ब्रिटिश सरकार 'भारत सुरक्षा नियम' कानून के तहत शासन चलाती थी। इस कानून की अवधि समाप्त होने वाली थी। सरकार चाहती थी कि इस कानून के स्थान पर एक नया और अधिक कठोर कानून बनाया जाये, ताकि वह भारत पर आसानी से राज्य कर सके। अतः १० फरवरी १९१९ को भारत के वायसराय लॉर्ड चेम्सफोर्ड ने एक समिति नियुक्त की। सर सिडनी रौलेट नामक अधिकारी को इस कमेटी का अध्यक्ष बनाया। इस कमेटी में भारत में चल रही क्रांतिकारी गतिविधियों को रोकने के लिए ब्रिटिश सरकार को दमनकारी शक्तियाँ देने का सुझाव दिया। इस सुझाव के आधार पर दो प्रस्ताव या विधेयक (बिल) बने, जो रौलेट बिल कहलाये। पहला बिल आगे जाकर कानूनन बना जो रौलेट एक्ट कहलाया। इस कानून का असली नाम था– 'द एनारकीकल एण्ड रिवॉल्युशनरी क्राइम्स एक्ट– १९१९' अर्थात् साम्राज्य विरोधी एवं क्रांतिकारी अपराध अधिनियम। इस रौलेट एक्ट ने सरकार को मनमाने दमनकारी कानून बनाने के अधिकार दे दिए।

गाँधीजी को इस कानून के बनने से गहरा धक्का लगा। उनको इसके विरोध का एकमात्र विकल्प सत्याग्रह लगा। उन्होंने मुम्बई में एक सत्याग्रह सभा बुलाई और सम्पूर्ण भारत में हड़ताल का आह्वान किया।

सर्वमान्य जनता में इस 'काला कानून' को लेकर तरह–तरह की भ्रांतियाँ फैल गईं। यथा इसके अन्तर्गत दो या तीन व्यक्ति भी आपस में बातें करते पाये गये तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया जायेगा। किसी भी विवाह या शवयात्रा पर पाँच रुपये टैक्स देना होगा। खेती सरकार की सम्पत्ति होगी, जो कभी भी आधी या पूरी हड़प ली जायेगी। सर्वसामान्य समाज के द्वारा

भी इसका विरोध होने के उपरान्त भी वायसराय टस से मस नहीं हुआ। उसने कानून नहीं हटाया अपितु उसे यथावत् रखा।

२८ फरवरी को अमृतसर के वन्देमातरम् हॉल में रौलेट एक्ट के विरोध में एक बड़ी सभा हुई। इस सभा में काले कानून के विरोध में एक प्रस्ताव पारित किया गया। २३ मार्च को इसी स्थान पर फिर से सभा हुई। उस के बाद २९ मार्च को जो सभा हुई, उसमें भारतमंत्री (ब्रिटेन के मंत्रिमण्डल में भारत के विषय देखने वाले सदस्य) से प्रार्थना की गई कि वह रौलेट एक्ट पर वीटो करे और इस कानून को वापस लें। इसी सभा में गाँधीजी का संदेश पढ़कर सुनाया गया और आग्रह किया गया कि ३० मार्च को सभी देशभक्त पूर्ण हड़ताल करें तथा उस दिन व्रत रखें। इस आग्रह के अनुसार ३० मार्च को अमृतसर में पूर्ण हड़ताल रही तथा जलियाँवाला बाग में एक बड़ी सभा आयोजित की गई।

उधर पंजाब सरकार ने ४ अप्रैल को डॉ. सतपाल तथा सैफुद्दीन किचलू पर सार्वजनिक भाषण देने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। ५ अप्रैल को अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर मील्स इविंग ने नगर के प्रमुख नागरिकों तथा अंग्रेज सरकार के वफादारों से यह वादा लिया कि ६ अप्रैल को गाँधीजी द्वारा आयोजित हड़ताल नहीं होने देंगे। परन्तु ६ अप्रैल को, ३० मार्च से भी बड़ी तथा व्यवस्थित हड़ताल रही। इस हड़ताल में सरकार की दमनकारी नीति के विरुद्ध असन्तोष एवं रोष प्रकट हुआ। समाज में ६ अप्रैल की इस हड़ताल को 'राष्ट्रीय दिवस' घोषित किया। राष्ट्रीय दिवस की घोषणा से पंजाब का लेफ्टीनैंट गर्वनर सर माइकल ओ डायर भयंकर क्रोधित हुआ। उसने प्रतिक्रिया में डॉ. सतपाल व किचलू जैसे बदमाशों से निपटने की चुनौती दी। ओ डायर ने इन दोनों देशभक्तों को बदमाश कहा, इससे उसकी नीयत समझ में आ जाती है। ७ अप्रैल को उसमें कौंसिल की मीटिंग में समाचार पत्रों तथा नेताओं को गालियाँ दी। ८ अप्रैल को, ६ अप्रैल की सफल हड़ताल का ब्यौरा कमिश्नर को पत्र द्वारा भेजा। इस पत्र में उसने स्थिति को अत्यंत भयंकर बताते हुए सैनिक शक्ति बढ़ाने की माँग की। इस माँग से उसकी नीयत में खोट दिखती है कि वह शक्ति के बल पर देशभक्तों को कुचलना चाहता था।

इसी बीच ९ अप्रैल को रामनवमी का त्योहार आया। जिसे हिन्दू और मुसलमानों ने मिलकर पूर्ण शांति के साथ मनाया। डॉ. हाफिज मोहम्मद बशीर ने रामनवमी के जुलूस का नेतृत्व किया था। हिन्दु नेताओं ने एक मस्जिद से अपना संदेश दिया था। इस अनोखी हिन्दु-मुस्लिम एकता को देखकर अंग्रेज सरकार बहुत भयभीत हो गई। उनको यह एकता, 'फूट डालो और राज करो' की नीति को खुली चुनौती प्रतीत हुई। उन्हें यह एकता फूटी आँख नहीं सुहाई।

दूसरी ओर ९ अप्रैल को ही पंजाब सरकार ने गाँधीजी को पलवल रेल्वे स्टेशन पर पंजाब में न घुसने का नोटिस दिया। गाँधीजी द्वारा इस नोटिस का विरोध करने के फलस्वरूप उन्हें गिरफ्तार करके वापस मुम्बई भेज दिया गया। गाँधीजी की गिरफ्तारी से पूरे देश में उत्तेजना फैल गई। सरकारी दस्तावेजों के अनुसार मुंबई, कलकत्ता, पंजाब तथा उत्तर पश्चिम सीमा प्रान्त के विभिन्न भागों में हिंसात्मक घटनाएँ हुई। पंजाब के गवर्नर ओ डायर ने अपनी क्रूरनीति के अन्तर्गत रौलेट एक्ट विरोधी आन्दोलन का दमन करने का मार्ग अपनाया।

९ अप्रैल की रात्रि में ही ओ डायर ने डिप्टी कमिश्नर को आदेश दिया कि डॉ. सतपाल तथा किचलू को गिरफ्तार कर लिया जाए। अगले दिन १० अप्रैल को डिप्टी कमिश्नर ने दोनों नेताओं को अपने बंगले पर बुलाया। दोनों प्रातः १०.३० बजे डिप्टी कमिश्नर के बंगले पर पहुँचे। वहाँ उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और एक ब्रिटिश सैनिक दस्ते के साथ इन्हें धर्मशाला (वर्तमान में हिमाचल प्रदेश में) भेज दिया गया। लगभग ११ बजे ज्योंही इनकी गिरफ्तारी का समाचार नगर में फैला, त्योंही दुकानें फटाफट बन्द हो गई और लोग इकट्ठा होने लगे। यह भीड़ अपने दोनों नेताओं को छुड़ाने की माँग करने के लिए डिप्टी कमिश्नर के बंगले की ओर चल पड़ी। इस भीड़ का नेतृत्व रत्नू और बुग्गा कर रहे थे। ये दोनों महाशय, जिन का पूरा नाम रतनमल तथा चौधरी बुग्गामल था जो डॉ. सतपाल व सैफुद्दीन किचलू के सहयोगी थे। हॉलगेट ब्रिज पर इस शांत भीड़ को रोक दिया गया। एक सैनिक टुकड़ी को मार्ग में खड़ी कर उनका आगे का रास्ता रोक रखा था। वहाँ खड़े एक मजिस्ट्रेट ने इस निहत्थी और शांत भीड़ को गैर-कानूनी बताकर सेना को गोली चलाने का आदेश दे दिया। इस गोलीबारी में १५-२० लोग मारे गये और २५-३० लोग घायल हुए। परिणामस्वरूप भीड़ तितर-बितर हो गई।

भागती भीड़ का गुस्सा फूटना स्वाभाविक था। अकारण

उनके निर्दोष साथियों को गोलियों से भूना गया था। भीड़ उत्तेजित हो गई और लौटते समय असामाजिक तत्वों ने मार्ग में तोड़फोड़ व आगजनी शुरु कर दी। अनेक सरकारी इमारतों, रेल्वे स्टेशन व पोस्ट ऑफिसों को आग के हवाले कर दिया। एक गोली में कुछ लोगों का एक अंग्रेज महिला से झगड़ा भी हुआ। इस हिंसात्मक कार्यवाही से अंग्रेज सरकार घबरा गई। उसने जालंधर ब्रिगेड़ के इंचार्ज ब्रिगेडियर जनरल ई. एच. डायर को इस आक्रोश को दबाने के लिए सेना सहित अमृतसर बुला लिया। जनरल डायर ११ अप्रैल रात्रि ९ बजे ही सेना सहित अमृतसर आ धमका। डायर रात्रि में ही डिप्टी कमिश्नर से मिला और निर्देश प्राप्त किये। १२ अप्रैल को डायर ने १२५ ब्रिटिश सैनिकों तथा ३१० भारतीय सैनिकों के साथ नगर में फ्लैग मार्च किया। हवाई जहाज द्वारा भी नगर का निरीक्षण किया गया । पायलट की रिपोर्ट के अनुसार नगर पूर्णतः शान्त था, फिर भी डायर ने बुग्गा तथा दीनानाथ सहित १२ लोगों को गिरफ्तार कर लिया और एक निषेधात्मक आदेश जारी किया कि यदि किसी सरकारी सम्पत्ति की हानि हुई तो अपराधी को कड़ी से कड़ी सजा दी जायेगी। इस प्रकार जनरल डायर ने अमृतसर पहुँचते ही यहाँ के लोगों के मन में भय फैलाने करने का प्रयत्न किया, जिससे यहाँ के लोग डर के मारे घरों में दुबके बैठे रहें। परन्तु उनका ऐसा सोचना गलत सिद्ध हुआ।

१३ अप्रैल १९१९ का वह अत्यंत पवित्र दिन था। पूरे पंजाब में बैशाखी पर्व मनाया जा रहा था। १६९९ ई. में दशम गुरु गोविन्द सिंह जी ने इसी दिन खालसा पंथ की स्थापना की थी। देश-धर्म-रक्षार्थ अपना बलिदान देने को तत्पर होने वाले पंज प्यारों की कथा आपने सुनी होगी। वहीं बलिदान की कथा इस वैशाखी पर जलियाँवाला बाग में दोहराई जाने वाली थी।

१० अप्रैल से १२ अप्रैल तक की घटनाओं ने ब्रिटिश शासन को १५८७ की क्रांति में पड़ी करारी मार की याद दिल दी थी, इसलिए भयभीत डायर ने आज के दिन सभी बैठकों, सभाओं और जुलूसों पर प्रतिबन्ध लगा दिया साथ ही चेतावनी भी दे डाली कि सभी व्यक्ति रात्रि ८ बजे से अपने घरों में ही रहें, रात्रि में कर्फ्यू लग जायेगा। कोई भी व्यक्ति कर्फ्यू में घर से बाहर न निकले। डायर को लगा था कि इस निषेधाज्ञा के बाद किसी भी प्रकार की गतिविधि नहीं होगी। परन्तु वह यह नहीं जानता था कि जान हथेली पर रखकर देश की स्वतंत्रता हेतु जूझने वाले देशभक्त ऐसी निषेधाज्ञाओं से नहीं डरते। दोपहर में १२.४० बजे ही डायर को सूचना मिली कि शाम को चार बजे जलियाँवाला बाग में एक सभा होगी। जनरल डायर यह सूचना सुनकर आग बबूला हो उठा। निषेधाज्ञा की अवहेलना को उसने स्वयं का घोर अपमान माना। इस अपमान से वह तिलमिला उठा, और उसने इसका बदला लेने का मन ही मन में निश्चय कर लिया।

जनरल डायर के बदला लेने से पहले मैं आपको जलियाँवाला बाग की भौगोलिक स्थिति बता देता हूँ। इस भूमि के मालिक का नाम जल्ली था, इसलिए यह जलियाँवाला बाग कहलाता है। वास्तव में यह कोई बाग नहीं है, अपितु एक मैदान है जो चारों और लोगों के घरों की पिछली दीवारों से घिरा हुआ है। इसमें आने-जाने का एक ही संकरा मार्ग है। सामान्यतया इस मैदान में मेले लगते हैं या जनसभाएँ आदि होती हैं। खाली समय में लोग इस मैदान में गप्पे लगाते हैं, मनोरंजन करते हैं या विश्राम करते हैं। इसी जलियाँवाला बाग में चार बजे सभा शुरु हुई थी। सभा में १६ से २० हजार तक लोग उपस्थित थे।

डायर तो पहले से ही अपने आदेश की अवहेलना होने के कारण जला भुना बैठा था। जब उसे चार बजे सभा शुरु होने की सूचना मिली तो बदला लेने के लिए ९० सैनिकों एवं हथियारों से भरी हुई दो गाड़ियाँ लेकर वह जलियाँवाला बाग पहुँचा। बाजार से जलियाँवाला बाग में प्रवेश करने का एकमात्र मार्ग केवल साढ़े सात फीट का ही था। इसलिए हथियारबन्द दोनों गाड़ियों को बाहर ही छोड़ कर वह ९० सैनिकों के साथ अन्दर घुसा। सब से पहले उसने उन सैनिकों को अन्दर आने-जाने वाले संकरे मार्ग के आगे खड़ा कर मार्ग को अवरुद्ध कर दिया। अब एक भी व्यक्ति बाग से बाहर नहीं निकल सकता था, ऐसी स्थिति बना दी गई थी।

उधर सभा चल रही थी। डायर के आने तक सभा में सात वक्ता बोल चुके थे तथा रौलेट एक्ट को हटाने एवं १० अप्रैल को हुई हिंसा के प्रति रोष प्रकट करने वाले दो प्रस्ताव भी पारित किये जा चुके थे। अब समाचार पत्र 'वक्त' के सम्पादक बोलने के लिए आये ही थे कि लोगों ने देखा जनरल डायर हथियारबन्द सैनिकों को लेकर बाग में घुस रहा है।

उसके बाग में घुसते ही कुछ लोग चिल्लाए ''आ गया, आ गया।'' लोग सम्भलते, उससे पहले ही डायर ने बिना किसी को चेतावनी दिये गोली चलाने का आदेश दे दिया। ९० सैनिक एक साथ दनादन गोलियाँ चलाने लगे। सभा में भगदड़ मच गई। लोग इधर-उधर भागने लगे। भागते हुए लोग गोलियों का शिकार बन धड़ाधड़ गिरने लगे। अपनी जान बचाने के लिए दीवारों पर चढ़ने लगे तो उन्हें भी निशाना लगा लगा कर गोलियाँ मारी गई। माताओं को और कुछ नहीं सूझ तो वे अपनी गोदी के बच्चों को बचाने के लिए कूएँ में कूद गई। एक को कुएँ में कूदते देख दूसरी माताएँ भी कुएँ में कूदने लगी। एक नहीं दो नहीं, कुल १२० लोग कूएँ में कूद गए। कुआँ लोगों की लाशों से पट गया।

अभी भी गोलियाँ तो लगातार चल ही रही थीं। गोलियाँ तब तक चलीं जब तक समाप्त न हो गई। गोलियाँ समाप्त होने पर ही वह हत्यारा डायर वहाँ से गया। परन्तु तब तक तो हजारो निर्दोष-निहत्थे लोग मारे जा चुके थे। जहाँ देखो वहाँ लाश बिखरी पड़ी थीं, जलियाँवाला बाग की मिट्टी रक्त-रंजित हो चुकी थी। घायल पड़े-पड़े कराह रहे थे। जो बच गये थे वे हतप्रभ थे, उन्हे कुछ सूझ ही नहीं रहा था। वे अपने नाते रिश्तेदारों को कैसे ढूँढें? उनकी तो आँखें ही पथरा गई थीं। वीभत्स दृश्य था। ऐसा भयंकर नरसंहार विश्व में किसी ने नहीं सुना था, जिसमें एक समय में एक स्थान पर निहत्थे हजारों लोगों को निशाना बना-बना कर मारा गया हो। मारने के लिए १६५० राउण्ड गोलियाँ चलाई गई हों। गोलियाँ तभी रुकी थीं, जब वे खत्म हो गई। १६५० राउण्ड गोलियाँ चलवाकर भी डायर यही कहता रहा, 'कुछ नहीं, २००-३०० लोग ही मरे हैं।' वास्तविकता यह थी कि इस नरसंहार में हजार से अधिक लोग मारे गये थे। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने महात्मा गाँधी को पत्र लिखकर मरने वालों की संख्या १५०० बताई थी। आओ! हम जलियाँवाला बाग के उन हुतात्माओं को अपनी मौन श्रद्धांजलि दें।

अंग्रेज सरकार ने घायलों और मृतकों के परिजनों की कोई सहायता नहीं की। लोग घायलों के उपचार हेतु इधर-उधर भटकते रहे। सहायता करना तो दूर रहा, अंग्रेज सरकार ने पूरे पंजाब में मार्शल लॉ लगा दिया। १५अप्रैल को जनरल डायर को अमृतसर का प्रशासक नियुक्त कर दिया। उसने २१८ व्यक्तियों को अपराधी घोषित किया। उनमें से ५१ को मौत की सजा सुनाई गई।

इस हत्याकांड ने विश्व के प्रबुद्ध वर्ग को झकझोर कर रख दिया। ब्रिटेन में भी इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। स्वयं ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने इस घटना को 'ब्रिटिश साम्राज्य के आधुनिक इतिहास में एकमात्र घटना' बतलाया। भारत मंत्री मान्टेग्यू ने इसे जनरल डायर की 'एक खतरनाक भूल' कहा। कर्नल वेजवुड ने डायर के इस कार्य से 'खतरनाक परिणाम' होने की बात कहते हुए इसे 'महानतम कलंक' बतलाया। सी.एफ.एंड्रयूज ने इस हत्याकांड की तुलना 'ग्लेंको के हत्याकांड' से की थी।

इस हत्याकांड ने ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति भारतीय वफादारी को चकनाचूर कर दिया। इसने सुधारवादियों तथा क्रांतिकारियों में तथा वफादारों व देशभक्तों में तीव्र अन्तर पैदा कर दिया। इस हत्याकांड ने बिटिश शासन के भारी भरकम सिद्धांतों यथा-उदारवाद तथा न्याय, की पोल खोलकर रख दी।

जलियाँवाला बाग के इस भीषण नरसंहार ने अनेक नेताओं के हृदय परिवर्तन कर दिये। महात्मा गाँधी ने प्रथम विश्वयुद्ध में भारतीयों को अंग्रेजों का पूर्ण सहयोग करने का आह्वान किया था। गाँधी जी इस नरसंहार के बाद अंग्रेजों के विरोधी हो गये थे। उन्होंने 'केसरी-ए-हिन्द' का स्वर्णपदक तथा 'जुलौ वार मेडल' अंग्रेजों को लौटा दिये। गाँधीजी के साथ-साथ गुरुकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने ब्रिटिश सरकार की दी हुई 'नाईट' की उपधि त्याग दी।

भगतसिंह उस दिन लाहौर में थे। वहीं उन्होंने इस जघन्य हत्यांकाड का समाचार सुना। दूसरे ही दिन वे अमृतसर आए, जलियाँवाला बाग में गये। वहाँ शहीदों के खून से सनी मिट्टी पर अपना मत्था टेका। उस पवित्र मिट्टी को बोतल में भरकर अपने घर ले आए। घर लाकर उसे अपने पूजा घर में रखा।

स्वतंत्रता की चेतना को सदा जाग्रत रखने वाली संसार के किसी भी चंदन से अधिक पवित्र माटी है भी हर भारतवासियों के लिए मस्तक पर तिलक करके योग्य भी है।

• जोधपुर (राज.)

(१३ अप्रैल को इस हत्याकाण्ड का शताब्दी वर्ष सम्पूर्ण हो रहा है)

लंदन में प्रतिशोध

ऊधमसिंह का पराक्रम

• प्रो. श्रीकृष्ण 'सरल'

जलियाँवाला बाग की घटना का प्रत्यक्षदर्शी एक बारह वर्ष का बालक ऊधमसिंह भी था। इस बालक ने केवल आँसू बहाते रह जाना नहीं सीखा था। लन्दन जाकर २१ वर्ष बाद इस हत्याकाण्ड के खलनायक जनरल डायर का वध करके मातृभूमि का ऋण चुका ही दिया–

वे क्रांति-प्रसारण के, लपटों के दिन थे वे
हो रहे क्रांति-पंथी सक्रिय भारत भर में,
अंतर-अंतर में आजादी की ज्योति जली
हो गई चेतना जाग्रत थी तब घर-घर में।

जो बालक तब केवल बारह-वर्षीय रहा
जब जलियाँवाला बाग रक्त से स्नात हुआ,
भुन गए हजारों लोग गोलियों के द्वारा
जब हत्याओं का सक्रिय झंझावात हुआ।

यह बालक ऊधमसिंह गया बाबा के सह
गोलियाँ चलीं, बाबा ने उसको बचा लिया,
भू पर पोते को लिटा, ढाल बन गए स्वयं
पोते की रक्षा को अपना बलिदान दिया।

वह बाढ़ गोलियों की बालक ने देखी थी
दम तोड़ रहे मरते लोगों को देखा था,
आहत लोगों का आर्तनाद था सुना करुण
तब हाय! हाय! करते लोगों को देखा था।

चीत्कार कराहें आहें, सभी सुनीं उसने
पानी को चिल्लाते लोगों को देखा था,
गर्दनें लुढ़कती देखीं उसने लोगों की
आखिरी तड़प खाते लोगों को देखा था।

संकल्प कर लिया तभी वीर बालक ने था
अंग्रेजों से इसका अवश्य बदला लूँगा,
जिसने यह हत्याकाण्ड किया, करवाया है
उन हत्यारों को मैं इसका उत्तर दूँगा।

संकल्प कर लिया, चाहे जान भले जाए
अपनी धरती की शान नहीं जाने दूँगा,
जिसकी रक्षा को प्राण लुटाए वीरों ने
उस परम्परा की आन नहीं जाने दूँगा।

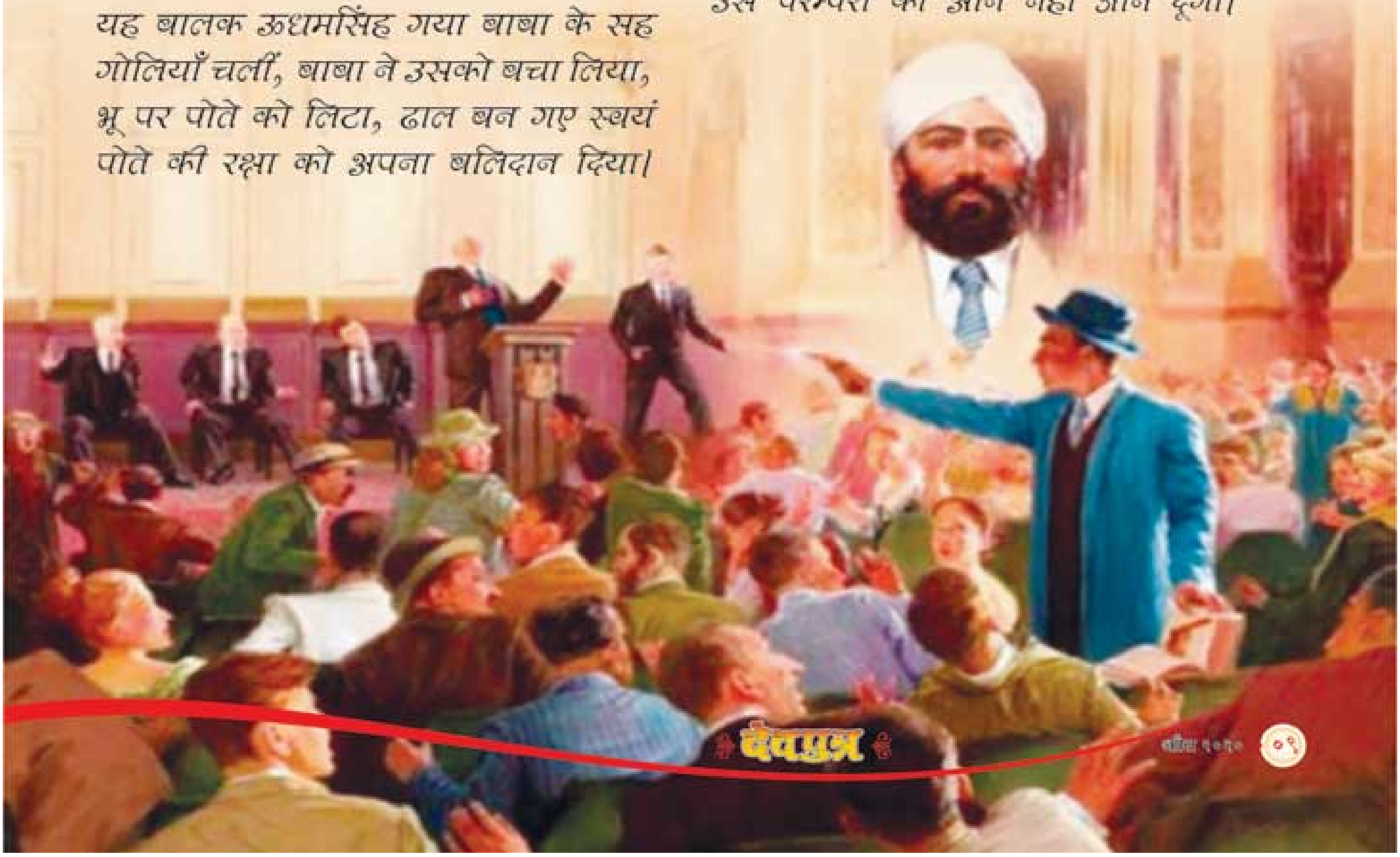

हर देशभक्त को प्यार न जीवन से उतना
जितना उसको अपनी धरती से होता है,
यदि दाग धरा के आँचल पर लग जाए तो
वह उसको अपने गर्म रक्त से धोता है।

अपमान धरा का हमको सह्य न होता, हम
अपमानों का बदला भरपूर चुकाते हैं,
अन्यायों के आगे हम झुकते नहीं कभी
अपने आगे हम उसका शीश झुकाते हैं।

वह जलियाँवाला बाग कथा कहता अपनी
जिसने तन पर गोलियाँ हजारों खाई थीं,
निर्दोष रक्त की प्यास लगी ओ डायर को
गालियाँ उसी की जिह्वा ने बरसाई थीं।

ओडायर का आदेश, गोलियाँ डायर की
नर-नारी बालक-वृद्ध भुने होले जैसे,
भारत माता के आँचल पर लग गया दाग
था जटिल प्रश्न, यह दाग धुले आखिर कैसे।

चेतनाशील वह बालक ही तो था, जिसने
संकल्प किया, मैं दाग धरा का धोऊँगा,
जब तक हत्यारे का न रक्त मैं बहा सका
तब तक जीवन में नहीं चैन से सोऊँगा।

बचपन अपनी सीमा को लाँघ हुआ यौवन
यौवन में दहके अरमानों के अंगारे,
भारत माँ का अपमान नहीं भूला यौवन
वह जा पहुँचा हत्यारे के घर के द्वारे।

उस उद्यत यौवन का था ऊधमसिंह नाम
ओडायर के पीछे ऊधम लन्दन में था,
अपने यौवन की गर्मी उसके तन में थी
संकल्प किया जो बचपन में, वह मन में था।

इक्कीस वर्ष के बाद मिला उसको अवसर
इक्कीस वर्ष तक अंतर में तूफान पला,
इक्कीस वर्ष तक घाव देश के हरे रहे
इक्कीस वर्ष अन्तर्ज्वाला में वीर जला।

इक्कीस वर्ष साधना वीर की सजग रही
इक्कीस वर्ष तक भारत ने संताप सहा,
इक्कीस वर्ष पश्चात् देश का दाग धुला
जब लन्दन में उस हत्यारे का खून बहा।

गौरांग देश इंग्लैण्ड, राजधानी लन्दन
लन्दन में भारी चहल पहल का आयोजन,
आयोजित हत्यारे ओडायर का भाषण
उस भरी सभा में हुई गालियों की दनदन।

जा पहुँचा ऊधमसिंह सभा को चीर वहाँ
उसने हत्यारे ओडायर को ललकारा,
भारत माँ की जय बोल दाग दी तब गोली
फट पड़ा शत्रु तन से शोणित का फव्वारा।

पिस्तौल वीर की रही गरजती दन-दन कर
ओडायर का तन उसने छलनी कर डाला,
धुल गया दाग भारत माँ के अपमानों का
उस क्रांति वीर की हुई शान्त अन्तर्ज्वाला।

भारत के बेटे ने दुनिया को दिखा दिया
भारत कोई अपमान नहीं सह सकता है,
सम्मान देश का छुए शत्रु कोई, तो वह
दुनिया में जीवित कहीं नहीं रह सकता है।

इस वीर कृत्य का पुरस्कार था बस फाँसी
वह क्रांति वीर हँसकर फन्दे पर झूल गया,
हो गया हिन्द का रक्त उजागर दुनिया में
हर देशभक्त का वक्ष गर्व से फूल गया।

(सरल जी के अमरग्रंथ क्रांति गंगा से साभार)

॥ लद्दाख की लड़ाई ॥

रणजीत की रणनीति

• मदनलाल बिरमानी

सन् १८३४ ई. हिन्दुस्थान के इतिहास का वह विशेष मोड़ है, जब राजा गुलाब सिंह ने महाराजा रणजीत सिंह के साम्राज्य की सीमाओं को लद्दाख तक बढ़ाने का निश्चय किया। लद्दाख १५वीं शताब्दी तक तिब्बत का अंग रहा था और तत्पश्चात लद्दाखी लामाओं ने उस पर अपना राज्य स्थापित किया था। इस समय वहाँ का लामा था त्सेपाल नमग्याल। इन्हीं दिनों प्रसिद्ध साहसिक यात्री मूर क्राफ्ट लद्दाख आया और नमग्याल को ईस्ट इंडिया कम्पनी के साथ अलग से संधि करने की प्रेरणा दी। महाराजा रणजीत सिंह को इस बात का पता चला तो उन्होंने उक्त यात्री की ताड़ना तो की ही, साथ ही उन्होंने राजा गुलाब सिंह को लद्दाख पर विजय प्राप्त करने की योजना कार्यान्वित करने के लिए कहा, क्योंकि यह शंका उत्पन्न हो गई थी कि कल को यह क्षेत्र कहीं अंग्रेजों के साथ सीधे सम्पर्क स्थापित कर शत्रु की आधार स्थली ही न बन जाए। अतः राजा गुलाब सिंह ने किश्तवाड़ा के अपने सेना अधिकारी जनरल जोरावर सिंह को अपने सर्वश्रेष्ठ सैनिक इकट्ठे करके लद्दाख की राजधानी लेह को महाराज रणजीत सिंह की गोद में ला डालने के लिए कहा।

''जोरावर, तुम मेरे सर्वाधिक विश्वस्त सेना नायक हो,'' राजा गुलाब सिंह ने कहा, ''देश का उत्तर-पूर्वी पर्वतीय क्षेत्र हमारी सेनाओं के घोड़ों की टाप की प्रतीक्षा कर रहा दिखाई देता है।''

''आदेश दें, महाराज।''

''क्या तुमने इतिहास का अध्ययन किया हैं?'' गुलाब सिंह ने प्रश्न किया और किसी उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना बोले, ''जानते हो, यह जम्मू प्रदेश भगवान श्रीरामचंद्र जी कुल के एक राजा जम्बूलोचन ने बसाया था। ''जम्बू द्वीपे, भरत खंडे आर्यावते यह मंत्र तो तुमने सुना ही होगा।''

''अवश्य!'' जोरावर सिंह ने कहा।

''एक समय आर्यों के इस देश की सीमाएं मध्य एशिया और उस से भी आगे ध्रुव प्रदेश तक विस्तृत थीं।''

राजा गुलाब सिंह उत्तर दिशा में दूर-दूर तक अपनी

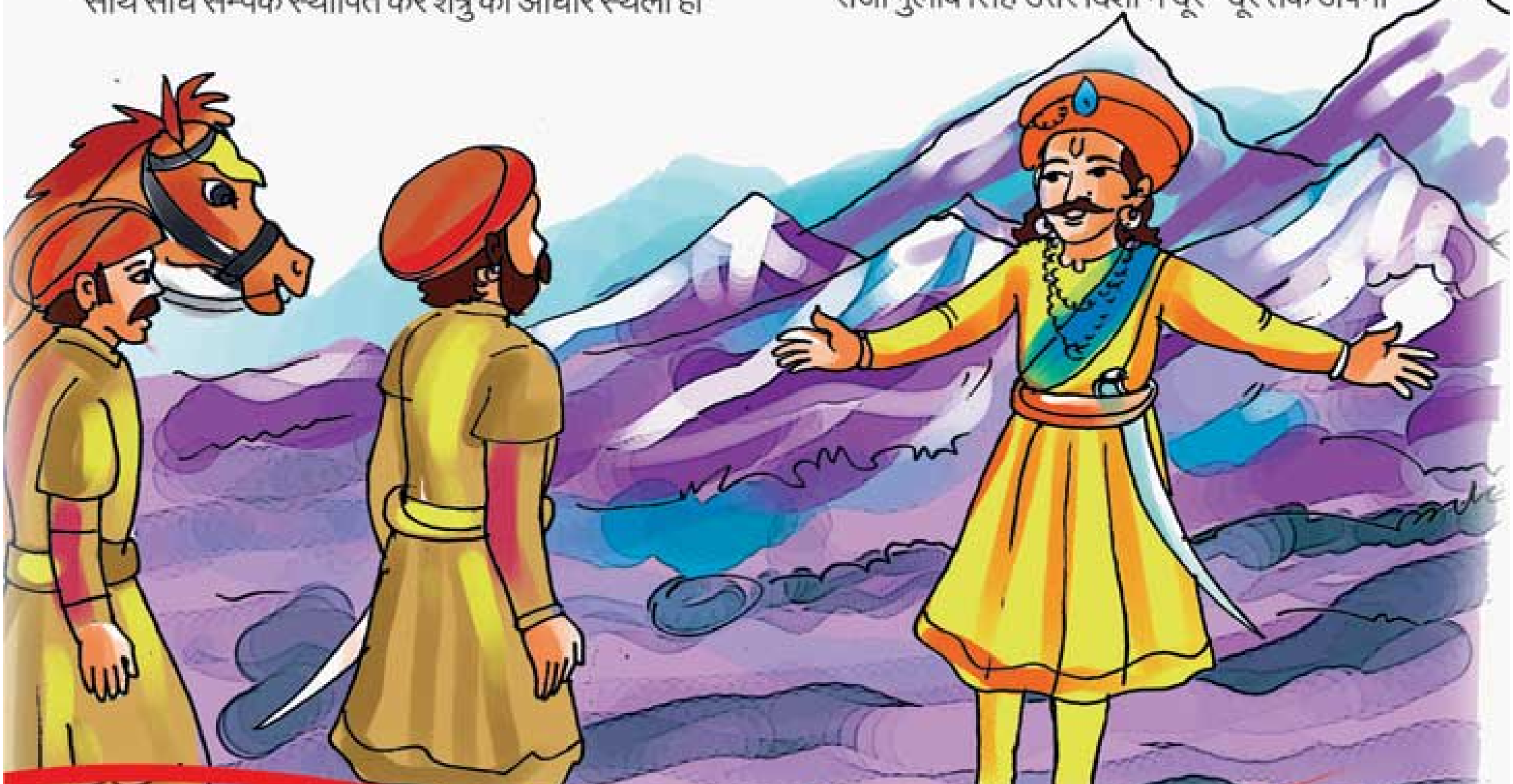

बाहें फैलाए खड़ी पर्वत–शृंखलाओं पर दृष्टि टिकाए बोले।

''जी सरकार!''

''और मान्धाता ने तो आधे चीन पर भी विजय प्राप्त कर ली थी। मानसरोवर और मानाग्राम हमारे उसी महामहिम पूर्वज के नाम की याद दिलाते हैं। अभी–अभी विक्रमी संवत् की सातवीं शताब्दी तक भी कश्मीर नरेश महाराजा ललितादित्य सिंकियांग, मंगोलिया आदि देशों से भी कर वसूल किया करते थे।''

''निश्चय ही महाराजा ललितादित्य बड़े पराक्रमी यौद्धा थे। मुझे तो कई बार ऐसा लगता है कि उन की रणभेरी हिमालय के शैल–शिखरों में आज भी निनादित हो रही है।''

''लेकिन क्या जोरावर! हम उस अतीत के सच के आधार पर ही जीवित रह सकते हैं? जरा सोचो, आज का सच क्या है, आज हम कहाँ खड़े हैं? कश्मीर ही क्या, जम्मू राज्य भी आज अनेक संकटों से घिरा है। मैं अतीत से प्रेरणा तो लेता हूँ, किन्तु कोरा अतीतवादी नहीं हूँ। ताजा समाचार यह है कि चीनियों द्वारा भड़काए हुए लद्दाखी आज हमारे प्रदेशों पर धावा बोलने के षडयंत्रों में व्यस्त हैं, और सुनो, रणनीति का सिद्धांत है कि शत्रु के साथ युद्ध उसी की भूमि के अंदर घुस कर करना अधिक श्रेयस्कर होता है। विस्तारवादी प्रवृत्ति के आक्रांताओं को परास्त करने के लिए उन्हें उन के मूल स्थानों से ही खदेड़ने की योजना हमें बनानी होगी। प्रतिरक्षा के स्थान पर प्रत्याक्रमण की रणनीति हमारा मार्गदर्शन करेगी।''

''सच है। आप की यह रणनीति वास्तव में ही आज की परिस्थितियों में सब प्रकार से उचित होगी।''

''और देखो, जोरावर! मेरा यह भी विश्वास है कि अपनी कुछ दुर्बलताओं के बावजूद महाराजा रणजीत सिंह ही वह व्यक्ति हैं, जिस ने समय की आवश्यकता को समझा है। छोटी–मोटी जागीरों के रूप में फैले छोटे राज्यों को एकीकृत किया है। वही वह व्यक्ति है, जिसने सतलुज नदी से ले कर अटक तक के क्षेत्र में विदेशी अत्याचारी आक्रांताओं के पैर उखाड़ दिए हैं। उनका यह कार्य हिन्दुस्थान के इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय है। पूज्य गुरुओं की शिक्षाओं का अनुसरण करते हुए रणजीत सिंह हिन्दुत्व, हिन्दु समाज तथा हिन्दुस्थान के वास्तविक रूप को कायम करने के लिए एक तेजस्वी शासक के रूप में उभर रहे हैं। इसीलिए मेरी श्रद्धा उनके प्रति अटूट है। हमें सीमोल्लंघन तथा सीमा विस्तार के उनके महान कार्य में अधिक से अधिक सहायक होने की योजना करनी है, जिस का प्रथम चरण होगा उत्तर से पूर्व की ओर दिग्विजय के लिए शीघ्रातिशीघ्र प्रस्थान। इससे उत्तरांचल की स्थिति सुदृढ़ होगी और इस ओर से देश की सीमाएं सर्वथा सुरक्षित होंगी।''

''विश्वास रखिए, ऐसा ही होगा। सेवक को तो बस आप के संकेत की ही प्रतिक्षा थी।'' कह कर जोरावर सिंह ने आज्ञा ली और बैशाखी (सन् १८३४ ई.) के सूर्य की पहली किरण के साथ ही अपने सैनिकों को घोड़ों की बागें लद्दाख की ओर मोड़ दीं। ●

देवपुत्र परिवार पत्र मेला के परिणाम घोषित

देवपुत्र परिवार पत्र मेला २०१९ के लिए प्राप्त प्रविष्टियों का निर्णायकों द्वारा सम्यक् परीक्षण कर पाँचों श्रेणी में निम्नांकित तीन-तीन सर्वश्रेष्ठ प्रतिभागियों को पुरस्कार विजेता घोषित किया।

दादा दादी को पत्र - कुलदीप शर्मा (मसूदा), मोनिका (मसूदा), रमेश (मसूदा)।

माँ को पत्र - जितेन्द्र सिंह (मसूदा), बन्दना चौहान (मसूदा), रविना किलक (मसूदा)।

शिक्षक को पत्र - किशन श्रीवास्तव (अमलाई), अनिल कुमार (मसूदा), गंगासिं (मसूदा)।

सामाजिक परिजन को पत्र - तनिष्क बड़गुजर (मसूदा) प्रथम, सीमा प्रजापत (मसूदा) द्वितीय, शिल्पा (मसूदा) तृतीय

भारत माता को पत्र - निशांत कुमार (सर्री), नवीन शर्मा (मसूदा), नवनीत शर्मा (बुढ़ार)।

विजेताओं को बधाई देते हुए संपादक डॉ. विकास दवे ने उन्हें शीघ्र पुरस्वकार भेजे जाने की घोषणा की।

बापा रावल

• आनन्द मिश्र 'अभय'

मेवाड़–वीरभूमि मेवाड़ का नाम लेते ही मन मस्तिष्क के सामने त्याग, बलिदान, पौरुष, पराक्रम, स्वातन्त्र्य गौरव का वह विस्मयकारी इतिहास प्रत्यक्ष मूर्त हो उठता है, जिस पर विश्व के किसी भी कोने में निवास या प्रवास कर रहे प्रत्येक राष्ट्रभक्त का शीश सहज ही गर्वोन्नत हो उठता है। मेवाड़ के इस इतिहास की आधारशिला जिस महापुरुष ने रखी थी, उसे लोग 'बापा रावल' के नाम से ही जानते हैं। इस महान विभूति–सम्पन्न महापुरुष को उसकी लोकप्रियता के कारण जनता आदर से 'बापा' कहती थी और 'रावल' उपाधि थी। दोनों ही ऐसे घुल–मिल गये कि 'बापा रावल' नाम ही प्रसिद्ध हो गया इस महापुरुष का तथा वास्तविक नाम लोगों की दृष्टि और स्मृति दोनों से ओझल ही हो गया। मेवाड़ की परम पावन वीर–प्रसू भूमि का इतिहास ही प्रारम्भ होता है बापा रावल से। इस इतिहास पर गत बारह सौ वर्षों से जो पर्दा पड़ा रहा है, उसको हटाकर बापा रावल के वास्तविक नाम के साथ ही उसका वास्तविक इतिहास भी अब तक हुई ऐतिहासिक शोधों के परिप्रेक्ष्य में जिस रूप में उभरकर प्रत्यक्ष सामने आता है, वह इस प्रकार हैं–

'बापा रावल' या 'बप्पा रावल' का इतिहास जनश्रुतियों, दन्तकथाओं और पुरातात्त्विक साक्ष्यों की पृष्ठभूमि में बहुत कुछ छिपा रहा है, जिसका सुचारु, सुसंगत और तर्कपूर्ण ताना–बाना बुना जाने पर जो चित्र आकार ग्रहण करता हे, उसके अनुसार गोहिल या गुहिल–वंश–वृक्ष में बापा का नाम कहाँ पर आता है, इसका निश्चय सर्वप्रथम पन्द्रहवीं शताब्दी में महाराणा कुम्भा (कुम्भकर्ण) ने पण्डितों से गहन विचार–विमर्श करने के पश्चात् किया और ईडर के गुहादित्य गोहिल का पाँचवाँ वंशज माना, परन्तु तब के बाद से जो आज तक की शोधों में जो अन्य साक्ष्य प्राप्त हुए हैं, उनके अनुसार ईडर के गोहिल या गुहिल वंश के गुहादित्य की सातवीं पीढ़ी में उत्पन्न महेन्द्र का पुत्र था बापा रावल और बापा रावल का असली नाम कालभोज था। कालभोज ही मेवाड़ के प्रथम गोहिलवंशी शासक के रूप में इतना लोकप्रिय हुआ कि लोग परमश्रद्धा एवं आदर के साथ उसे पिता–तुल्य मानकर 'बापा रावल' कहने लगे।

बापा रावल का शासन–काल ७३४ से ७५३ ई. तक माना जाता है। बापा के जन्म, पालन–पोषण और चित्तौड़ के सिंहासन पर आरूढ़ होने तथा मेवाड़ के पश्चिम, पश्चिमोत्तर और उत्तर दिशाओं में दिग्विजय का घटना–चक्र अद्भुत रूप से विस्मयकारी एवं पौरुष, पराक्रम तथा शौर्य

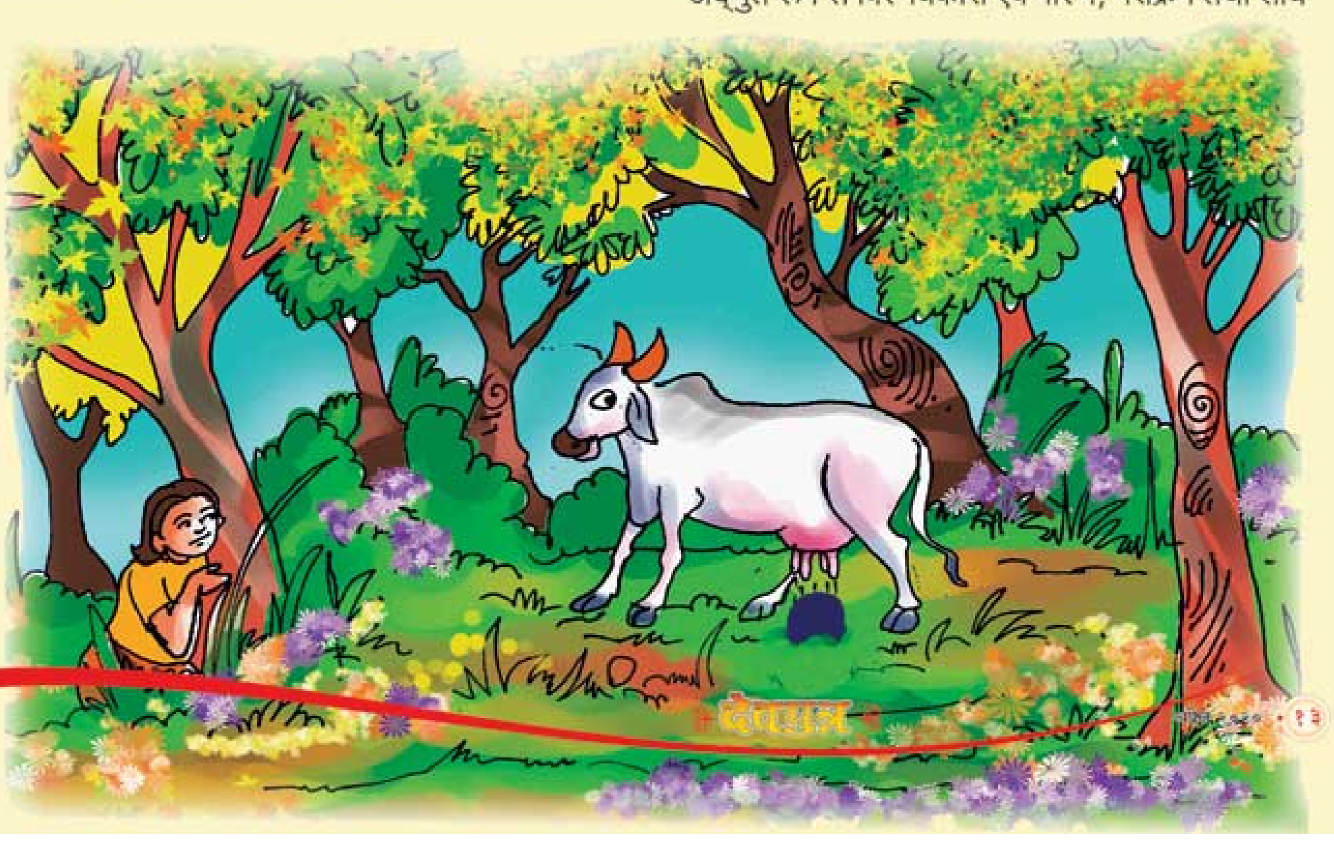

की गौरव गाथा है।

अरबों ने मुहम्मद-बिन-कासिम के नेतृत्व में जब ७१२ ई. में सिन्ध पर आधिपत्य जमाया, उसके कुछ ही वर्षों के पश्चात् कालभोज (बापारावल) का उद्भव हुआ था। वल्लभीपुर का राजा शिलादित्य विदेशी आक्रमणकारियों के विरुद्ध युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ। उस समय उसकी गर्भवती रानी पुष्पावती, जो उस समय अपने मायके में थी, को पितृ-गृह से लौटते समय मार्ग में राज्य के विनाश और पति को वीर-गति प्राप्त होने की सूचना मिली। वह अपनी सुरक्षा हेतु एक गुफा में जाकर रही। इसी गुफा में उसे पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। पुष्पावती ने वीरनगर में रह रहे एक तपस्वी ब्राह्मण-दम्पति को अपना पुत्र सम्यक् लालन-पालन के लिए सौंपकर सती-धर्म का पालन किया। यह बालक जब कुछ बड़ा हुआ, तो बजाय पढ़ने-लिखने में रुचि लेने के निकटवर्त्ती ईडर राज्य के भील शासक के पुत्र तथा अन्य भील बालकों के साथ जंगल में गायें चराने में अधिक आनन्द लेने लगा। गायों के झुण्ड की एक गाय जब शाम को घर लौटती, तो उसके थनों में दूध न पाये जाने पर उसके स्वामी को जंगल में चोरी से दूध दुह लिए जाने का सन्देह हुआ। अगले दिन भील बालकों के साथ गाय चराने वाले इस तेजस्वी बालक ने गायों के समूह पर ध्यान रखा, तो पाया कि दोपहर में एक गाय झुण्ड से छिटक कर जंगल के एक घने क्षेत्र की ओर चुपके से चल दी। बालक छिपकर पीछे लग लिया। गहन-कान्तार में एक स्थान पर जाकर गाय खड़ी हो गयी और गाय के थनों से दुग्ध-धार बह निकली। गाय जिस प्रकार आयी थी, उसी प्रकार चुपके से जाकर अपने झुण्ड में वापस जा मिली। गाय के दूध की चोरी का रहस्य पता चल गया। उस स्थान का निरीक्षण करने पर वहाँ एक प्राचीन शिवलिंग मिला। यही शिवलिंग बाद में मेवाड़ के अधिष्ठातृ-देव भगवान एकलिंग के रूप में पूजित हुआ। वह स्थान नाग-ह्रद (नागदा) था, जो मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ के निकट स्थित ध्वंसावशेषरूप में विद्यमान है। वर्तमान नागदा रेल्वे स्टेशन का इस नागह्रद या नागदा से कोई सम्बन्ध नहीं है। और वह गाय, वह गाय वास्तव में पश्चिमी राजस्थान से लेकर बिलोचिस्तान (बालाक्ष प्रदेश) की सीमा तक पायी जाने वाली विलुप्त प्राय कामधेनु नस्ल की थी। इस नस्ल की गाय के दुग्ध में कुछ जड़ी-बूटियों के साथ सिद्ध हो गयी तलवार से मोटे से मोटा लौह-स्तम्भ, कदली-वृक्ष (केला) के तने की तरह एक ही प्रहार में काटा जा सकता था और खप्पर में विष-मिश्रित पदार्थ से विष सोख लेने की क्षमता उत्पन्न हो जाती थी। तपस्वी ब्राह्मण दम्पति की देख-रेख में पले बढ़े और शिक्षा दीक्षा प्राप्त इस कालभोज नामक के बालक को ऐसी ही एक तलवार और सिद्ध खप्पर उसके गुरु, उक्त तपस्वी ब्राह्मण (खाखी-नाथपन्थी गृहस्थ साधु) से प्राप्त हुआ था जिसे उसने आजीवन अपने साथ रखा। यही बालक कालभोज अपने आचरण, सूझ-बूझ, शौर्य एवं प्रामाणिकता के बल पर तत्कालीन मेवाड़ के वृद्ध एवं दुर्बल शासक मानसिंह मौर्य का पहले विश्वास-पात्र सामन्त बना और फिर चित्तौड़ पर अरब सेना के आक्रमण को विफल करने के पश्चात तो मानसिंह ने इसी को शासन सत्ता सौंप दी। एक किंवदन्ती के अनुसार मानसिंह मौर्य को किसी भाँति यह विदित हो गया था कि कालभोज उसका भागिनेय (भानजा) है। कालभोज ने चित्तौड़ पर आक्रमण करने वाली मुसलमानी सेना को हराकर ही संतोष नहीं कर लिया, अपितु उसे लगातार खदेड़ता हुआ उसने गजनी पर आधिपत्य जमा लिया।

बापा रावल (कालभोज) ने मेवाड़ राज्य की सुव्यवस्था करने के साथ ही इस्लामी आक्रमणकारियों को लगातार परास्त करते हुए उनसे अफगानिस्तान, तुर्किस्तान, काफिरिस्तान (अफगानिस्तान और चित्राल के मध्य का दुर्गम-प्रदेश) तथा मध्य एशिया को मुक्त कर वहाँ से ईरान और बिलोचिस्तान, सिन्ध पर आधिपत्य कर वहाँ हिन्दू पताका फहरा दी। साथ ही उसने इस क्षेत्र के मुस्लिम शासकों की कन्याओं से विवाह किये। चन्द्रगुप्त मौर्य ने बाख्त्री के यूनानी राजा (सिकन्दर के पूर्व सेनापति) सेल्यूकस को पराभूत कर जिस प्रकार उसकी पुत्री से विवाह किया था और उससे दहेज में गान्धार ले लिया, उसी प्रकार बापा रावल ने इस मुस्लिम शासकों की पुत्रियों से विवाह कर उन्हें अपनी रानी बनाया था। आज के पश्चिमोत्तर भारत के अनेक कबीले अफरीदी, वजीरी आदि तथा नौशेरा पठान ये सब बापा रावल की इन्हीं रानियों से उत्पन्न ३२ पुत्रों की सन्तति हैं। हिन्दू राजकुलों की रानियों से बापा रावल के ९८

सन्तानें जन्मी बतायी जाती हैं, परन्तु पटरानी नागदा की सोलंकी राजकुमारी, जिससे बचपन में झूलनोत्सव के समय खेल-खेल में आम्र-वृक्ष के फेरे लेकर विवाह रचाया था, वही रही। उसी के पुत्र खुम्माण को राजपाट सौंपकर ७५३ई. में बापा खाखी साधु के रूप में तपस्या करने कश्मीर की ओर चला गया। खुम्माण ने भी इस्लामी आक्रमण को पराभूत कर अपने पिता के ईरान से तूरान तक फैले विशाल-साम्राज्य को अक्षुण्ण रखा।

बापा रावल के राज्य-काल के समय की परिस्थितियों पर ऐतिहासिक दृष्टि से गहन-विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि-

(१) बापा रावल ने अपने अतुल पराक्रम से न केवल पश्चिमोत्तर भारत से इस्लामी शासन को उखाड़ फेंका था, वरन इस्लामी आक्रमणकारियों की पराजय पर पराजय देकर ईरान, मध्य-एशिया, चीनी तुर्किस्तान (चीन का वर्तमान सिंक्यांग प्रान्त) काफिरिस्तान, अफगानिस्तान को भी उससे मुक्त कराकर उन्हें अपने राज्य का अंग बना लिया था।

(२) उक्त प्रदेशों के तत्कालीन मुस्लिम शासकों की पुत्रियों से विवाह कर उन्हें अपनी रानी बनाकर उक्त क्षेत्रों के हिन्दूकरण को गति प्रदान की थी। उसकी सन्तानें ही कालान्तर में वहाँ हिन्दू शासन सत्ता को बनाये रखीं।

बापा रावल के इन सफल विजय अभियानों के परिणाम स्वरूप सिन्ध पर ७१२ई. में हुए अरब आक्रमण के पश्चात् से लेकर ११वीं शती ईसवी के प्रारम्भ तक लगभग ३०० वर्ष के कालखण्ड में कोई इस्लामी शासक भारत पर आक्रमण करने का दुःसाहस न कर सका। मुहम्मद-बिन-कासिम के सिन्ध पर आक्रमण के पश्चात् इतिहास में फिर १०२४ ई. में महमूद गजनवी का ही आक्रमण दिखलायी पड़ता है। इतने लम्बे अन्तराल तक बापा रावल के परम पराक्रमी नाम का प्रताप ही प्रभावी रहा दिखता है।

(४) मेवाड़ के गुहिलौत (सिसोदिया-वंश जिसकी एक शाखा है।) वंश के इस प्रथम (आदि) शासक ने मेवाड़ का भगवान एकलिंग को ही स्वामी माना और स्वयं को उनका सेवक, पुजारी। रावल/राणा या महाराणा उपाधि भगवान एकलिंग जी के प्रतिनिधि के रूप में ही है। आज तक यही टेक मेवाड़ राजवंश की चली आ रही है। इतना ही नहीं, नेपाल के शासक तथा राणा भी इसी वंश के हैं और अपने को भगवान पशुपतिनाथ का प्रतिनिधि मानते हुए वहाँ का शासन चलाते हैं। मेवाड़ के महाराणा जब एकलिंग जी के दर्शनार्थ जाते हैं, तो उस समय पुजारी या रावल वही होते हैं, प्रतिदिन वाला पुजारी नहीं। यह देन बापा रावल की ही है।

(५) इस्लाम मजहब के प्रवर्त्तक मोहम्मद साहब के दौहित्र हसन और हुसेन को उनके परिवाजनों तथा सेवकों सहित कर्बला में निर्दयतापूर्वक तलवार के घाट उतार देने वाले यजीद को बापा रावल ने ही पराभूत कर भारत की सीमाओं से बाहर खदेड़ा था। बापा रावल की सेना के उन्हीं वीर सैनिकों की सन्तानों को इतिहास में हुसैनी ब्राह्मण बतलाया गया है, बापा (कालभोज) का पालन पोषण चूँकि एक तपस्वी ब्राह्मण दम्पति ने किया था, अतः बापा का उल्लेख इतिहास मे 'विप्र' और 'विप्रवर' के रूप में भी आया है। इसी से उसके सैनिकों, जिन्होंने यजीद को मार भगाया था, की सन्तानों को ब्राह्मण और हुसैन की सहायतार्थ जाने के कारण हुसैनी कहा गया।

बापा क्षत्रिय कुलावतंस था, इसका प्रमाण अजमेर में प्राप्त उसकी एक मुद्रा है, जिस पर एक ओर श्री बप्पा उत्कीर्ण है और दूसरी ओर एक त्रिशूल, त्रिशूल के सामने एकलिंग जी और उनकी ओर मुँह किये नन्दी है। मुद्रा के निम्न भाग में एक मूर्ति (जो बापा की ही प्रतीक है) बनी हुई। मुद्रा के पृष्ठ भाग के सूर्य, छत्र, चँवर, सवत्सा गो और दुग्ध गंगा में तैरती मछली आदि चीजें बनी हुई हैं।

मेवाड़ की राजमुद्रा पर अंकित ''जो राखे निज धर्म कौ, तोहि राखै कर्तार'' और बापा रावल के साथ ईडर के भील राजा माण्डलिक के दोनों पुत्र की मूर्ति अंकित है। सूर्यवंशी (लव के वंशज) एकलिंग जी के प्रतिनिधि मेवाड़ के गुहिल राजवंश के आदि पुरुष बापा रावल के अप्रतिम व्यक्तित्व एवं कृतित्व का एक विशेष आयाम यह भी है कि अपने पुत्र खुम्माण (खुम्माण रासो ग्रंथ इसी के नाम पर है) को राज्य सौंपकर कश्मीर जाकर तपश्चर्यारत रहते हुए शरीर त्याग किया, जहाँ उनकी समाधि आज भी विद्यमान है।

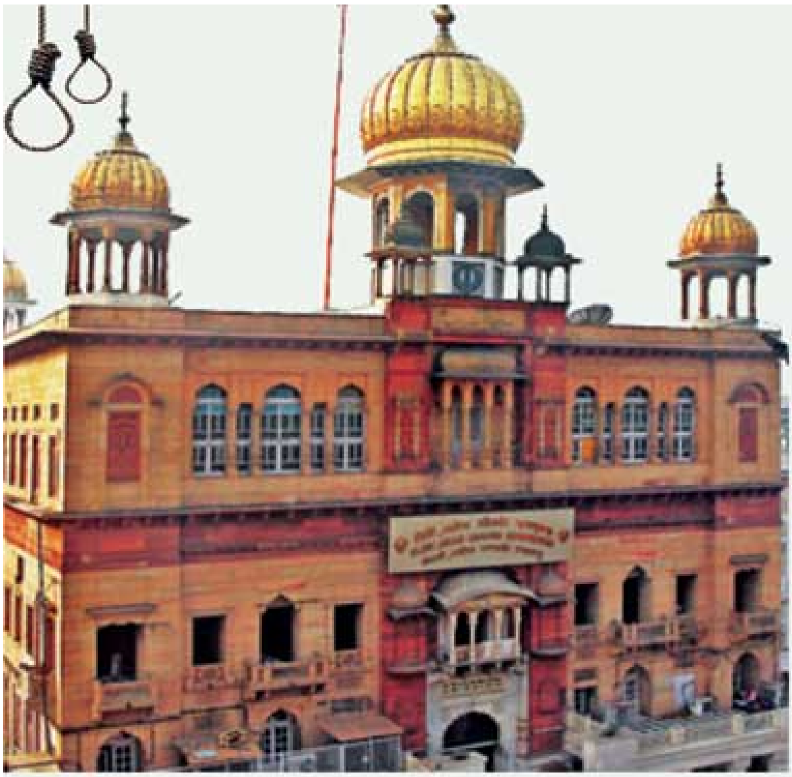

।। दिल्ली में दिया शीश ।।

हिन्द की चादर

• संकलित

ऐतिहासिक गुरुद्वारा सीसगंज दिल्ली के चाँदनी चौक में स्थित है। इसका निर्माण सिखों के नौवें शुरू, श्री गुरू तेग बहादुर जी की पुण्य स्मृति में किया गया है। गुरू जी को मुगल बादशाह औरंगजेब के हुक्म से यहाँ शहीद किया गया था।

औरंगजेब ने सन् १६५० से १७०७ तक हिन्दुस्तान पर राज किया। शासन पर कब्जा पाने के लिए उसने अपने पिता शाहजहाँ को गिरफ्तार कर लिया और अपने भाईयों को मरवा डाला। वह पूरे हिन्दुस्तान से हिन्दू धर्म को मिटाकर इस्लाम धर्म फैलाना चाहता था। उसने हिन्दुस्तान में कई जगहों पर मन्दिरों को तुड़वाया जैसे मथुरा (केशव देव), गुजरात (सोमनाथ), उड़ीसा (जगन्नाथपुरी), बनारस (काशी विश्वनाथ) तथा बंगाल, राजस्थान, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश इत्यादि के अनेक प्रमुख मंदिर। हिन्दुओं पर अधिक कर लगाए। उसने अपने अधिकारियों को हुक्म दिया कि हिन्दुओं के माथे से तिलक मिटा दिए जाएँ और उनके जनेऊ उतार कर जबरदस्ती मुसलमान बना दिया जाए। उसका आदेश था कि हर रोज 'सवा मन' जनेऊ (लगभग ४६ किलो) हिन्दुओं के गले से उतारकर (अर्थात् उनका धर्म परिवर्तन कर या उन्हें मारकर) उसके सामने पेश किए जाएं। यह आदेश तेजी से लागू होने लगा। परिणाम स्वरूप अनेक हिन्दुओं ने इस्लाम कुबूल कर लिया। जिन्होंने विरोध किया उन्हें अपनी जान गंवानी पड़ी।

इस अत्याचार से हिन्दू समाज में बहुत खलबली मची थी। इस जुल्म से मुक्ति पाने के लिए उन्होंने अमरनाथ की गुफा में भगवान शिव की पूजा भी की। कई दिनों की पूजा और विद्वानों की सलाह से वे आखिर इस नतीजे पर पहुँचे कि इस समय सिखों के नवें गुरू श्री गुरु तेगबहादुर ही उन्हें इस संकट से निकाल सकते हैं और उनकी रक्षा कर सकते हैं। वे यह भी जानते थे कि सिख गुरूओं ने पहले भी मुगलों के अत्याचार का मुकाबला किया था और जीत हासिल की थी। इसलिए ५०० कश्मीरी पंडितों का एक जत्था गुरु जी के दरबार में आनंदपुर (पंजाब) गया और उन्हें औरंगजेब के दर्दनाक अत्याचारों द्वारा हिन्दुओं को मुसलमान बनाने से अवगत कराया। उनके मुखिया पंडित किरपा राम ने गुरू जी से फरियाद की– ''दीनबन्धु! हमें बादशाह औरंगजेब के जुल्म से बचाओ, उसने हुक्म दिया है कि हिन्दुओं को मुसलमान बना दिया जाए।''

गुरूजी इस्लाम के विरुद्ध नहीं थे। बल्कि इतिहास में ऐसे कई संदर्भ है जिनसे सिख गुरुओं का, मुसलमानों के प्रति स्नेह झलकता है। जैसे– ''मरदाना जो एक मुस्लिम परिवार के थे, सदा गुरु नानक के साथी रहे, पाँचवें गुरु अर्जुन देव जी ने हरिमंदर साहिब (स्वर्ण मन्दिर अमृतसर) की नींव, एक मुस्लिम पीर हजरत मिंया मीर द्वारा रखवाई, गुरु ग्रंथ साहिब में मुसलमान पीरों की वाणी को पूरे आदर के साथ शामिल किया गया है इत्यादि। परन्तु गुरु जी यह बर्दाश्त नहीं कर सकते थे कि किसी को अपना धर्म त्यागने के लिए विवश किया

जाए। उन्होंने बहुत ध्यानपूर्वक पंडितों की दुखःभरी गाथा सुनी।

इतने में उनके पुत्र बालक गोविन्द राय जी वहाँ आ पहुँचे। पंडितों को उदास बैठा देख अपने पिताजी के पास आये और पूछने लगे– ''पिताजी, यह कौन हैं? आप क्या सोच रहे हैं?''

''बेटा! औरंगजेब, हिन्दू धर्म मिटाना चाहता है। उसने हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का हुक्म दे दिया है।'' गुरु जी ने कहा।

''यह क्यों पिता जी?'' बालक गोबिन्द ने पूछा।

गुरुजी – ''औरंगजेब समझता है कि इस्लाम ही सच्चा मजहब है।''

बालक गोविन्द – ''पिताजी, फिर हिन्दु धर्म कैसे बचाया जाए?''

''गुरुजी– किसी महापुरुष के बलिदान से ही हिन्दु धर्म बच सकता है।''

''पिताजी, आप से बड़ा महापुरुष और कौन है जो इतनी बड़ी कुर्बानी दे सके।''– बालक गोबिन्द ने सहजता से कहा।

गुरूजी अपने बेटे के इस निडर व साहसिक उत्तर से बहुत प्रभावित हुए। विनाश के कगार पर खड़े संपूर्ण हिन्दू समाज की रक्षा के लिए अपनी कुर्बानी देने का उन्होंने मन बना लिया। उन्होंने सोच विचार कर उदास बैठे पंडितों से कहा, ''जाओ अपने इलाके के हाकिम इफतिखार खान से कहा कि वह पहले गुरु तेग बहादुर को इस्लाम कुबूल करने के लिए मनाये, फिर हम सब मुसलमान बन जायेंगे।'' दुखी और उदास पंडितों की जान में जान आई।

कश्मीरी पंडितों ने गुरु जी को प्रणाम किया और आशीर्वाद लेकर बड़े हौंसले से उनके दरबार से उठकर चले गए। अपने घर पहुँच कर इफतिखार खान को गुरुजी का संदेश दिया।

''हम सब मुसलमान बन जाएंगे, पहले हमारे गुरु तेग बहादुर जी को मुसलमान बनने के लिए मना लीजिए।'' गुरु जी का यह संदेश बादशाह औरंगजेब तक भी पहुँच गया। बादशाह ने सोचा कि अब उसका काम आसान हो गया, क्योंकि एक व्यक्ति के मुसलमान बनने से पूरा देश इस्लाम कबूल कर लेगा व उसका हिन्दुस्तान से हिन्दु धर्म को मिटाने का सपना साकार हो जाएगा। बादशाह ने हुक्म जारी कर दिया कि गुरु तेग बहादुर को गिरफ्तार कर फौरन दिल्ली लाया जाए। उसने गुरुजी की गिरफ्तारी पर इनाम भी घोषित कर दिया।

यह सुनकर गुरु जी खुद ही अपने परिवार से विदा लेकर दिल्ली के लिए चल पड़े। मालवे से होते हुए गुरुजी पटियाला, धमतान, जींद, लखनमाजरा, रोहतक तथा आगरा के रास्ते दिल्ली की तरफ आए।

आगरा जाने का उनका मुख्य कारण यह था कि वह हसन अली नाम के एक गरीब श्रद्धालु चरवाहे की मुदार पूरी करना चाहते थे कि ''हे गुरु, अगर आप गिरफ्तारी देना चाहें, तो कृपया मेरे माध्यम से दें, ताकि इनाम के

पैसे से मेरी गरीबी दूर हो सकें।''उन्होंने उस चरवाहे को बुलवाया और उसे अपनी अँगूठी व दुशाला दिया और कहा- ''भाई बाजार से मिठाई ले आओ।'' चरवाहा मिठाई लेने दुकान पर गया।

दुकानदार को शक हो गया कि चरवाहे ने अँगूठी व शाल चुराई है। वह उसे पकड़ कर थाने ले गया। चरवाहे ने थानेदार को बताया ''बाग में एक महात्मा ठहरे हैं। उन्होंने मिठाई लाने के लिए अँगूठी और दुशाला दिया है।'' थानेदार उसके साथ बाग में गया। वहाँ जाकर उसे पता लगा कि वह महात्मा तो गुरु तेग बहादुर हैं। आगरा में जहाँ गुरु जी ठहरे थे वहाँ अब गुरुद्वारा 'गुरु का ताल' स्थापित है। यह आगरा के मुख्य आकर्षणों में एक है। यहाँ दिन रात लंगर बंटता है। थानेदार ने गुरु जी के आगरा में होने की खबर दिल्ली भेज दी। बादशाह की फौज १०,००० से अधिक सिपाही आगरा पहुँच गए।

फौज के साथ अनेक हथियार बंद सिपाही थे। औरंगजेब को डर था कि गुरुजी की गिरफ्तारी की खबर कहीं आगरा के आस-पास जैसे मथुरा, भरतपुर, डीग, हाथरस, कोसी, धौलपुर, आवागढ़, भदावर, पीलीभीत इत्यादि (कुल ५२ राज्य) के हिन्दु राजाओं को लग गई तो वे बगावत कर देंगे क्योंकि ये राजा, सिख गुरुओं का उपकार मानते थे।

इन ५२ राजाओं के पूर्वजों को गुरु तेग बहादुर के पिता, ''गुरु हरगोबिन्द जी'' ने सन् १६१९ में उस वक्त के मुगल बादशाह ''जहाँगीर'' की लम्बी कैद से ग्वालियर के किले से अपने साथ आजाद करवाया था। गुरु हरगोबिन्द जी जब ५२ राजाओं को रिहा करा कर अमृतसर पहुँचे तो सिखों ने इस खुशी में पूरे शहर में दीपमाला व रोशनी की। इस दिन हिन्दुओं का धार्मिक पर्व दीवाली भी थी जिस कारण हिन्दू व सिखों द्वारा इस पर्व को मनाने में समानता है। गुरु हरगोबिन्द जी द्वारा ५२ राजाओं की रिहाई के बाद अमृतसर पहुँचने की खुशी में यह दिन (दिवाली) सिखों द्वारा ''बन्दीछोड़ दिवस'' के रूप में मनाया जाता है। इस दिन सिख अपने घरों को सजाते हैं, अपने मित्रों व रिश्तेदारों को मिठाई व अन्य उपहार देते हैं तथा एक दूसरे को ''बंदी छोड़ दिवस दी बधाई'' कह कर सम्बोधित करते हैं। ग्वालियर किले के बीचोबीच बना विशाल ''गुरुदारा बंदी छोड़'' आज भी उस ऐतिहासिक घटना की याद दिलाता है।

परन्तु गुरु जी तो कुरबानी के लिए पहले ही तैयार होकर आये थे। वे फौज के साथ चलने के लिए राजी हो गए।

औरंगजेब दिल्ली से बाहर गया हुआ था। उसके वजीरों व काजियों ने गुरु जी को बादशाह का हुक्म सुनाया- ''आपको इस्लाम धर्म कुबूल करना होगा। इसके बदले आप जो भी चाहें आपको मिलेगा।''

जब हर कोशिश के बावजूद गुरुजी नहीं माने तो काजी ने उन पर बहुत अत्याचार किए। गुरुजी अपने वचन पर अटल रहे। काजी को आदेश था कि गुरु जी के शिष्यों को सता कर गुरुजी के सामने मार दिया जाये। उसने सोचा कि यह दृश्य देखकर गुरुजी घबराकर अपने आप इस्लाम कुबूल कर लेंगे।

उनके एक शिष्य 'भाई मतीदास' को लकड़ी के घेरे में बांधकर एक बड़े आरे से चिरवाया गया। खून की धारें निकलती रहीं पर वे आखिरी सांस तक जपुजी साहिब

का पाठ करते रहे और अंत में शहीद हो गये। फिर बादशाह के सिपाही गुरु जी के दूसरे श्रद्धालु शिष्य 'भाई दयाला जी' को पकड़ कर लाये और उन्हें उबलती हुई पानी की देग में डाल दिया। वे जरा भी नहीं घबराये और गुरुबाणी का पाठ करते–करते उसी देग में समा गए। फिर ''सतीदास जी'' की बारी आई। उनके चारों तरफ रूई लपेटकर आग लगा दी गई। पर उन्होंने उफ् तक भी नहीं की। गुरुजी ने अपने तीन शिष्यों को आँखों के सामने शहीद होते देखा। पर शांति के पुंज गुरुजी बिल्कुल शांत रहे।

औरंगजेब की गुरुजी से कोई जाती दुश्मनी नही थी। वह चाहता था कि गुरुजी हिन्दुओं के मसीहा बनकर, उनकी मदद न करें व उनका साथ छोड़ दें। गुरुजी को यह मंजूर नहीं था। बादशाह के हुक्म से गुरुजी को ऐसे तंग पिंजरे में बंद कर दिया गया जिसमें ठीक से बैठना या खड़े रहना भी मुश्किल था। काजी व मौलवियों के जुल्म और बढ़ गए। एक बार फिर बादशाह औरंगजेब ने गुरुजी को मनाने के लिए उनके सामने ३ शर्तें रखी। पहली कोई करामात (करिश्मा) दिखाइये। दूसरा इस्लाम कुबूल कीजिए और तीसरा मरने के लिए तैयार हो जाएं।

गुरू जी बोले– ''कुदरत के नियम अटल हैं। यह सृष्टि भगवान के हुक्म से ही चलती है। करामात कहर का नाम है। मैं इस्लाम का आदर व सम्मान करता हूँ, लेकिन किसी पर धर्म परिवर्तन के लिए जुल्म करना अधर्म है। चाहे मैं खुद तिलक नहीं लगाता व जनेऊ नहीं पहनता पर हिन्दुओं के इस अधिकार के लिए कोई भी कुरबानी देने को तैयार हूँ।''

औरंगजेब को यह यकीन हो गया कि गुरुजी वचन पर अटल हैं। जब तक गुरुजी जिंदा हैं, उसक हिन्दु धर्म को मिटाने का सपना पूरा नहीं होगा।

उसने हुक्म भेज दिया कि चाँदनी चौक में लोगों के सामने गुरुजी को कत्ल किया जाए। पूरे शहर में ढिंढोरा पिटवा दिया गया।

११ नवम्बर सन् १६७५ का दिन था। गुरु तेग बहादुर जी ने प्रातःकाल स्नान व जपुजी साहिब का पाठ किया। फिर चाँदनी चौक में लाकर उनको एक वृक्ष में नीचे बैठा दिया गया। हिन्दुओं व मुसलमानों की भीड़ इकट्ठी हो गई।

आसमान पर बादल व काली घटायें छाई हुई थीं, हवा धीरे–धीरे तेज हो रही थी। गुरू जी मग्न बैठे पाठ कर रहे थे। थोड़ी देर पश्चात् जल्लाद आया। जल्लाद की तलवार चली और गुरुजी का सिर धड़ से अलग हो गया।

गुरुद्वारा सीस गंज से उस वृक्ष का तना जिसके नीचे गुरुजी को शहीद किया गया था व जिस कुएं पर गुरु जी ने शहीदी देने से पहले स्नान किया था, अभी तक सुरक्षित हैं। गुरुद्वारे के पास वाली इमारत जहाँ आजकल लंगर स्थान व ''कार पार्किंग'' है, वहाँ मुगल राज में कोतवाली (जेल) थी, जहाँ गुरू जी को कई महीनों तक कैद रखा गया था। यह कोतवाली भारत की स्वतंत्रता के बाद तक ''दिल्ली पुलिस'' के प्रमुख थानों में से एक थी। यह जगह १९७० के दशक में भारत सरकार ने गुरुद्वारा सीस गंज के विस्तार के लिए गुरुद्वारा कमेटी को सौंप दी।

इस गुरुद्वारे में पूरा दिन श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता है। उनका विश्वास है, जो मनुष्य गुरुजी का सच्चे मन से सिमरन करता है, उसे नौ निधियाँ (अर्थात् सभी आत्मिक व सांसारिक सुख) प्राप्त होती है और गुरुजी सभी जगह उसकी सहायता करते हैं।

''तेग बहादुर सिमरिये घर नौ निध आवै धाए, सब थांई होय सहाय''

गुरुजी के शहीद होते ही हाहाकार मच गई। ''यह जुल्म है, इतने बड़े संत को क्यों कत्ल कर दिया है? यह शासन अब ज्यादा देर चलने वाला नहीं।''

प्रकृति ने ऐसा भीषण रूप धारण किया कि आँधी–तूफान के कारण मुगल सिपाहियों को कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। लगता था मानों सारा ब्रह्मांड यह जुल्म देखकर क्रोध में आ गया हो। चारों ओर भगदड़ मच गई। इस भाग–दौड़ में गुरुजी का एक श्रद्धालु शिष्य ''भाई जैता'' आगे बढ़ा। उसने बड़ी फुर्ती से गुरुजी का सीस उठा कर, श्रद्धा से अपने कपड़ों में लपेट लिया। अपने दो साथी– भाई नानू और भाई ऊद्दा साथ लिये। छिपते–छिपते, पाँच दिन की यात्रा के पश्चात् कीरतपुर (पंजाब) जा पहुँचे।

भाई जैता ने बड़े बोझिल मन से, गुरु तेग बहादुर जी के सीस को उनके सुपुत्र बालक गोबिन्द राय के आगे रखा। ''भाई जैता'' एक पिछड़ी जाति (रंगरेटा) के थे। बालक गोबिन्द राय ने भाई जैताजी के साहसिक कार्य को सराहा व गले से लगाते हुए कहा– ''रंगरेटे, गुरू के बेटे।''

गुरु तेग बहादुर जी के सीस का बड़े सत्कार के साथ आनंदपुर साहिब में भी अब एक बहुत सुंदर गुरुद्वारा ''सीस गंज'' सुशोभित है। उधर दिल्ली में गुरू जी के एक और श्रद्धालु शिष्य, ''लाखी शाह बंजारा'' व उसका बेटा, ''नामहिया'' रुई और दूसरे सामान की कई बैलगाड़ियों को निकाल कर आगे ले गए। उन्होंने बड़ी फुर्ती के साथ गुरुजी के धड़ को उठाया और रूई के ढेर में छिपा दिया तथा बैल गाड़ियों को हांक कर अपनी बस्ती रायसीन ले गए।

(राष्ट्रपति भवन के निकट 'रायसीना रोड़', उस समय वहाँ रायसीना बस्ती की मौजूदगी की साक्षी है।)

इस दृश्य को उस समय के एक गायक ''कैसो भट्ट'' ने इस तरह वर्णन किया है–

चलो चलाई हो रही, गड़–गड़ बरसे मेघ,
लखी नगाहिया ले गए, तू खड़ा तमाशा देख।

दूसरी तरफ मुगल सिपाही परेशान थे कि गुरु जी का सीस और धड़ कहाँ गायब हो गए? क्योंकि चारों तरफ मुगल फौजों का डर था इसलिए, लखी शाह, गुरुजी के धड़ को सत्कार से अपने घर ले गया और अंतिम संस्कार के लिए, अरदास (प्रार्थना) के पश्चात् उसने अपने घर को ही आग लगा दी। मुगल फौज व लोगों ने यही समझा की लखी शाह के घर को आग लग गई है।

इस तरह प्रकृति ने भाई जैता और भाई लखी शाह के साहसिक कार्य से, गुरुजी के शरीर का अपमान होने से बचा लिया।

जहाँ लखी शाह ने अपने घर को आग लगाकर गुरुजी के धड़ का अंतिम संस्कार किया था वहाँ अब गुरुद्वारा रकाब गंज सुशोभित है। यह गुरुद्वारा नई दिल्ली के राष्ट्रपति भवन, संसद भवन और केन्द्रीय सचिवालय के समीप स्थित है। हर वर्ष गुरुजी के शहीदी स्थान से वर्तमान गुरूद्वारा रकाब गंज ले गया था। यह नगर कीर्तन चाँदनी चौक स्थित गुरुद्वारा सीस गंज से शुरु होता है और नई सड़क, चावड़ी चौक स्थित अजमेरी गेट, पहाड़ गंज, पंचकुईयाँ रोड़, कनाट प्लेस से होता हुआ गुरुद्वारा रकाब गंज पर समाप्त होता है।

यह अद्वितीय कुर्बानी लोगों के दिलो को छू गई। अतः गुरुजी को इन शब्दों से याद किया जाने लगा–

गुरु तेग बहादुर, हिन्द दी चादर

जिस तरह चादर हमारी रक्षा करती है, सर्दी–गर्मी से बचाती है उसी तरह गुरु तेग बहादुर जी ने हिन्दू धर्म और हिन्दुस्तान की रक्षा की।

।। उड़ीसा का नन्हा नाविक ।।

बाजी राउत

• रविचन्द्र गुप्ता

१० अक्टूबर, १९३८। दिन ढल चुका था। बाजी रावत अपने पिता के साथ नाव पर था। पिता ने पुत्र को भोजन करने के लिए घर जाने का आदेश दिया। बाजी रावत बोला– ''पिताजी ! आप तो रात को देर तक घाट पर रहेंगे, पहले आप भोजन कर आएँ। मैंने तो फिर घर पर जाकर सोना ही है।''

पिता को उसकी बात ठीक लगी। बाजी रावत को शाबसी देकर वह घर चले गये। बालक नदी की लहरों में हाथ से पानी उछाल कर खेलते हुए समय व्यतीत करने लगा। तभी उसकी निगाह एक पुलिस दल पर पड़ी। उसके मन में बिजली सी कौंधी– 'अरे पुलिस!' उसने मन में सोचा– ''शोर मचा कर गाँव वालों को सूचित करता हूँ।'' लेकिन पुलिस दल नाव की ओर ही आता दिखाई दिया। बाजी रावत ने शोर नहीं मचाया। उसने सोचा– ''शायद यह लोग नदी पार करने आ रहे हैं। मैं इन्हें नदी पार नहीं कराऊँगा। ये सिपाही शायद देशभक्तों को पकड़ने या लाठी–गोली से मारने के लिए ही तो दूसरी पार जा रहे होंगे।''

वह जमाना स्वतंत्रता आन्दोलन का था। हर प्रांत, नगर और गाँव व कस्बों में ''भारत माता की जय'' और 'महात्मा गाँधी की जय' के नारे गूँजते सुनाई देते थे। गाँधी जी के सत्याग्रह आन्दोलनों की देश भर में धूम थी। उड़ीसा के लोग उससे अछूते कैसे रहते? वहाँ प्रजा मंडल के नाम से एक संस्था बनाकर देशभक्त अपना आन्दोलन चला रहे थे। धनकेनाल जिले में ब्राह्मणी नदी के नीलकंठपुर घाट पर नौका चलाकर आजीविका चलाने वाला नाविक हरी रावत भी प्रजा मंडल का सदस्य था। जगह–जगह घूमकर देशभक्ति का प्रचार करने वाले कार्यकर्त्ता जब नदी पार करने आते तो कभी–कभी बालक बाजी रावत को उनकी बातचीत सुन–सुनकर देश के हालात की जानकारी मिल जाती थी। इसीलिए आज वह पुलिस दल को उधर आता देख चौकन्ना हो गया था।

बाजी रावत यह सब सोच ही रहा था कि पुलिस दल नाव के पास आ पहुँचा। तब तक उसने नाव को थोड़ा सा पानी में खिसका लिया और मुँह फेर कर खड़ा हो गया। एक सिपाही ने हाँक लगाई– ''ओ छोकरे! हमें नदी पार जाना है।''

बाजी रावत चुपचाप खड़ा रहा, मानो उसने कुछ सुना ही न हो। पुलिस वाला और जोर से चिल्लाया। बालक ने उसे भी अनसुना कर दिया। तभी एक पुलिस वाला पानी में से चलकर नाव पर जा चढ़ा। बालक का हाथ कसकर पकड़ते हुए क्रोध में भुनभुनाता हुआ बोला– तू बहरा है क्या? सुनता नहीं, हम क्या कह रहे हैं? चल नैया किनारे पर लगा और हमें नदी पार करा।''

बालक ने जोर से हाथ झटका और नाव पर दूर हट कर खड़ा हो गया। सिपाही का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। वह बंदूक की मूठ से वार करने के लिए बालक की ओर लपका। बालक ने जोर से चीख कर अपने बचाव के लिए चप्पू उठा लिया। सिपाही ने एक हाथ से चप्पू पकड़ा और बंदूक की मूठ बालक के सिर पर दे मारी। बालक गिर पड़ा। फिर तो सिपाही ने बंदूक की मूठ के प्रहारों से उसे लहू–लुहान कर दिया। बालक की चीख–पुकार सुनकर कुछ देर में गाँव के लोग भी इकट्ठे हो गये। ज्यों ही वे बालक को बचाने नाव की ओर बढ़े पुलिस ने उन पर गोलीबारी शुरू कर दी। अनेक ग्रामीणों ने अपनी जान दे दी, लेकिन सिपाहियों को नदी पार नहीं करने दी। बाजी रावत के सिर से बहुत अधिक खून बह चुका था। उसने उसी रात दम तोड़ दिया।

आज भी उड़ीसा के वनवासी और ग्रामीण क्षेत्रों में नन्हा नाविक (द लिटिल बोट्स मैन) नामक लोकगीत बड़ी श्रद्धा और तन्मयता से गाते हुए लोग देशभक्ति की उमंग में झूमने लगते हैं।

।। महाराष्ट्र का सिंह ।।

तानाजी मालुसरे

• बाबूलाल शर्मा

पात्र परिचय
जीजाबाई - शिवाजी की माताजी
शिवाजी - जीजा बाई के पुत्र
तानाजी - शिवाजी के सेनापति
रायबा - तानाजी के पुत्र
शैलार मामा - रायबा के मामा
उदयराज - मुगलों की सेना में सेनापति

जीजाबाई – (प्रातः सूर्य भगवान को जल चढ़ाते हुए, सामने मुगलों का हरा झण्डा। ॐ मित्राय नमः...ॐ मित्राय नमः...ॐ मित्राय नमः...।)

शिवाजी – (मंच पर आगमन, चरण स्पर्श कर) आई सा. प्रणाम। माँ आज आप उदास क्यों हैं?

जीजाबाई – शिवबा। जब मैं भगवान सूर्य को जल चढ़ाती हूँ तो यह मुगलों का झण्डा सामने आ जाता है जो मेरे हृदय को व्यथित करता है। कोंडाना के दुर्ग पर अब तो यह झण्डा एक क्षण भी सहन नहीं होता। इस पर स्वराज्य का झण्डा कब लहरायेगा?

(कोंडाना दुर्ग जीतना कोई बच्चों का खेल नहीं। यह सोचकर शिवाजी चिन्तित होते हैं और दुर्ग जीतने की योजना सोचने लगते हैं। इतनें में तानाजी व शैलार भी आ गये हैं। जीजाबाई व शिवाजी को प्रणाम कर बैठ जाते हैं।)

तानाजी – महाराज, आप और जीजामाता कुछ चिन्ता मग्न लग रहे हैं। चिन्ता का कारण बताकर मुझे आज्ञा दीजिए ताकि मैं आपकी चिन्ता दूर कर सकूँ। मुझ सेवक के होते आपको चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है?

शिवाजी – तानाजी, जीजामाता का आदेश है कि कोंडाणा दुर्ग पर शीघ्र ही स्वराज्य का झण्डा फहराया जाए।

तानाजी – इसमें चिन्ता की क्या बात है? सेवक को आदेश दीजिए। मैं कोंडाणा को जीतने के लिए अभी योजना बनाकर चढ़ाई करता हूँ। आप निश्चिंत रहें।

जीजाबाई – ताना। पहले तुम यह तो बताओ कि आज अचानक कैसे आना हुआ? रायबा का विवाह भी तो होने वाला था?

तानाजी – विवाह की सभी तैयारियाँ हो चुकी हैं, माताजी। मैं आपको निमंत्रण देने आया था, किन्तु पहले कोंडाणा की जीत होगी।

शिवाजी – नहीं, तानाजी। पहले आप रायबा का विवाह करें। उस विजय के अभियान पर तो मैं ही चलता हूँ।

तानाजी – नहीं महाराज, क्षमा करें। मेरे होते हुए महाराज को इस दुर्गम अभियान पर जाना पड़े तो मेरे जीने को धिक्कार है। मेरी प्रार्थना है कि इसके लिए मुझे आज्ञा दें। मैं पहले कोंडाणा का विवाह करूँगा, फिर रायबा का।

जीजा बाई – ताना। शिवाजी ने ठीक कहा। पहले रायबा की शादी करो। कोंडाना पर विजय बाद में करना।

तानाजी – जीजा माता। मेरे होते ऐसा कभी नहीं हो सकता। मैं रहूँ या न रहूँ रायबा की शादी तो हो जायेगी। पहले राष्ट्र कार्य करना होगा। उसके बाद व्यक्तिगत कार्य।

जीजाबाई – धन्य, तानाजी। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। विजय मिलनी ही चाहिए।

तानाजी – (प्रणाम करके जाता है) जो आज्ञा माता, महाराज को प्रणाम। सेना लेकर रस्सों सहित यशवंती गोह के साथ युद्ध के लिए जाते हैं। मंच पर किले की व्यवस्था।)

दृश्य परिवर्तन

तानाजी – (सैनिकों से) यहाँ का किलेदार उदयभान बहुत ही सतर्क है। किला भी बहुत मजबूत है। इधर दुर्ग सुरक्षित व अभेद्य है। अतः किस ओर से दुर्ग पर आक्रमण किया जाए?

शैलार मामा – तानाजी, गुप्तचर ने बताया है कि किले के पीछे सीधी दीवार है। उधर की सुरक्षा व्यवस्था ढीली है। अतः उसी ओर से दुर्ग पर आक्रमण करना चाहिए।

तानाजी – गुप्तचर की जानकारी ठीक है। चलें उधर से ही हमें आक्रमण करना है। इस यशवन्ती गोह को रस्सा बाँध कर दीवार पर फेंक दो और रस्से की सहायता से दुर्ग में प्रवेश करो।

खबरदार, मातृभूमि के सपूतों? किले में प्रवेश करते ही शत्रु पर टूट पड़ो। ऐसा भयंकर हमला बोलो कि शत्रु भाग खड़ा हो।

सैनिक – जो आज्ञा सेनापति, (किले मे ंप्रवेश करते हैं 'हर–हर महादेव' का जयघोष। एक साथ आक्रमण किया। घमासान लड़ाई होती है। तानाजी व उदयभान आमने–सामने हैं, एक ही वार में उदयभान मर जाता है। तानाजी भी वीर गति को प्राप्त होते हैं। कई मुगल सैनिक भी मारे गये। कुछ भाग खड़े हुए। कुछ ने हथियार डालकर आत्मसमर्पण कर दिया। सैनिक किले पर भगवा झण्डा लहराते हैं।)

सैनिक – 'जय भवानी', 'जय शिवाजी', 'हर हर महादेव'।

दृश्य परिवर्तन

(शिवाजी, जीजामाता बैठे हैं तभी संदेश लेकर एक सैनिक आता है।)

सैनिक – जीजामाता को प्रणाम, महाराज की जय हो। महाराज। कोंडाणा पर विजय प्राप्त कर ली, परन्तु....।

शिवाजी – परन्तु क्या...। बोलते क्यों नहीं? (रूँधें गले से व्यथित होकर)

सैनिक – महाराज... महाराज... आपके अनन्य सहयोगी वीर तानाजी ...।

शिवाजी – अब तानाजी नहीं रहे...! (थोड़ा रुककर) गढ़ आला पण सिंह गेला, तानाजी धन्य हैं। तानाजी का महान बलिदान भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा। तानाजी के बलिदान की स्मृति में कोंडाणा का नाम अब आगे से ''सिंहगढ़'' रहेगा। जय भवानी, जय तानाजी। जय मातृभूमि।

•

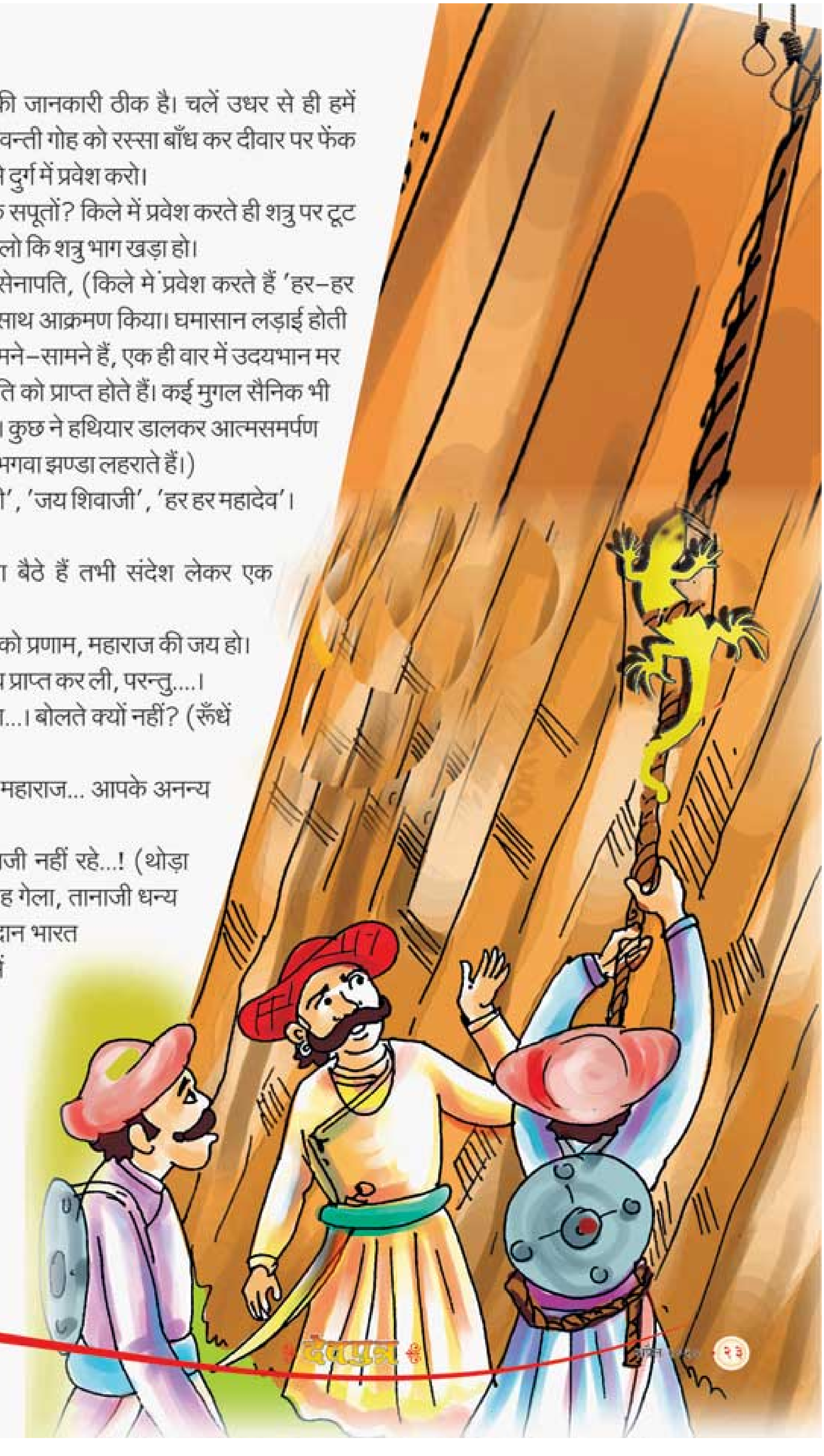

।। बुन्देलखण्ड का सपूत ।।

वीरवर छत्रसाल

• रूपसिंह

विन्ध्यवासिनी देवी का मंदिर, चारों ओर चहल-पहल मेला भरा हुआ, बालक छत्रसाल बाल सखाओं के साथ मेले में)

छत्रसाल – भाई जुझार! चलें पास की पुष्प वाटिका से देवी जी पर चढ़ाने फूल तोड़ लायें।

जुझार – क्यों नहीं युवराज! (साथियों से) चलो भाइयो! पहले देवी पूजा के बाद मेला देखेंगे।

(फूल तोड़ने दूर पहुँच जाते हैं, साथी पीछे रह जाते हैं।)

जुझार– युवराज! हम बहुत दूर आ गये, साथी पीछे रह गये हैं। चलो लौट चलें, महाराज ने भी अकेले जाने से रोका था, पूजन और देवी–दर्शन का समय भी तो निकला जाता है।

(लौटते हैं, यकायक घोड़ों की टापें सुनाई देती हैं।)

छत्रसाल – (जुझार को चिंतित देखकर) जुझार! तुम तो बहुत चिंतित दिखाई दे रहे हो, धैर्य से काम लो और अपनी बाहों पर भरोसा रखो, हम बुन्देल वीर हैं फिर हमारे पास धारदार तलवारें भी तो हैं।

(इसी समय सरदार असलम खाँ घोड़े से उतरता है और सिपाही भी उसके साथ है)

असलम खाँ– क्यों रे छोकरे! विन्ध्यवासिनी का मंदिर कहाँ है?

छत्रसाल– (उसी तरह अकड़ कर) क्यों तुम्हें मंदिर से क्या लेना देना। पूजा करनी है क्या?

असलम खाँ– (हंसते हुए) हा...हा...हा... मैं और पूजा, वह भी तेरी देवी की? बुत परस्त, तू समझता क्या है? हमारे बादशाह का हुक्म है कि मुल्क से बुत परस्ती खत्म कर दी जाय, हम मंदिर तोड़ने आये हैं। बता मंदिर कहाँ हैं?

छत्रसाल– (हँसते हुए फूलों की डलिया जुझार को देते हुए) भाई जुझार बहुत देर हो गई, चलो वापिस चलें।

(असलम मार्ग रोककर गरजता है)

असलम खाँ – काफिर! कहाँ भागता है, जानता नहीं

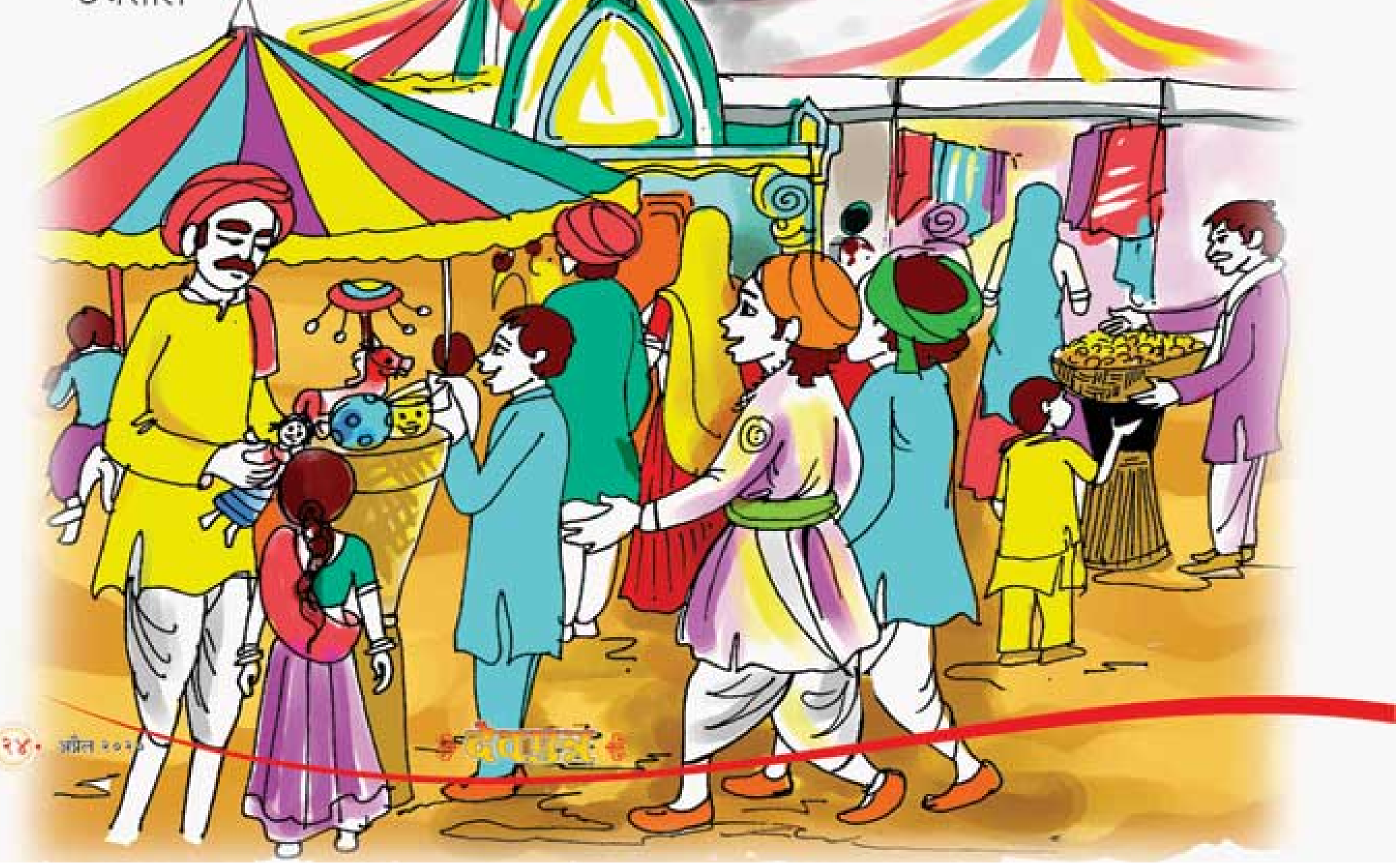

मैं कौन हूँ? बता मंदिर कहाँ है? बताएगा नहीं, तो सिर धड़ से अलग कर दिया जाएगा।

छत्रसाल – रुको ! (दायां हाथ तलवार पर) हा...हा...हा... अच्छा, तुम मंदिर तोड़ने आये हो मुगल सरदार! औरंगजेब तुम्हारे शहंशाह ने भेजा है? (आत्म विश्वास से बोलते हुए) देवी का मंदिर मेरे हृदय में है, ले इसे तोड़।

असलम खाँ – (चिल्लाकर) कमबख्त! क्यों अपनी जान दे रहा है? बता मंदिर कहाँ है? असलम की तलवार को नहीं देखता, (दिखाता हुआ) यह तलवार एक झटके में ही तुझे विन्ध्यवासिनी के पास पहुँचा देगी।

छत्रसाल– (वैसे ही गरज कर) कम सुनाई देता है क्या?

(असलम खाँ तलवार खींच लेता है और वार पर वार होने लगते हैं, युवराज और जुझार मुगलों से घिरे वीरता से लड़ रहे थे, इतने में पीछे से अन्य राजपूत बालक भी आकर युवराज की जयकार कर मुगलों से भिड़ जाते हैं।)

छत्रसाल – (असलम से लड़ता हुआ) अब देख मेरी तलवार की धार, बड़ी शेखी बघारता था। (गुस्से से तेजी से वार करता है।)

(असलम खाँ या अल्लाह–अल्लाह चिल्लाता हुआ गिरता है और अल्लाह के पास पहुँच जाता है, सभी मुगल सिपाही भाग खड़े होते हैं।)

(खबर सुनकर महाराज चम्पतराय बुन्देला सैनिकों के साथ आ जाते हैं, युवराज मुस्कराते हुए महाराज के चरण स्पर्श करते हैं)

चम्पतराय– (प्रेम से उठाते हुए) युवराज! क्या हुआ तुम खून रंगे हँस रहे हो!

छत्रसाल– कुछ नहीं महाराज! कुछ मुगल सिपाही सरदार असलम खाँ के साथ माँ का मंदिर भस्मसात् करने आये थे, दिल्ली सुल्तान औरंगजेब के आदेश पर, रास्ते में मुलाकात हो गई, मैंने उन्हें ठिकाने लगा दिया।

महाराज – सचमुच मेरे बेटे। कहीं चोट तो नहीं लगी। (छाती से लगाते हैं)

समवेत स्वर– विन्ध्यवासिनी माता की जय, महाराज की जय, हिन्दु कुल गौरव छत्रसाल की जय।

• **लखनऊ (उ.प्र.)**

॥ बाल प्रस्तुति ॥

गोआ का मुक्तियोद्धा : राजाभाऊ महाकाल

• विकास त्रिपाठी

राजाभाऊ महाकाल का जन्म २६ जनवरी १९२३ को उज्जैन म. प्र. में हुआ। उनके पिता का नाम बलवन्त भट्ट महाकाल तथा माँ का नाम अन्नपूर्णा देवी था। राजाभाऊ महाकाल ने बहुत से आन्दोलनों में भाग लिया था। उन्होंने एक और नए आन्दोलन में भाग लिया। गोवा मुक्ति आन्दोलन। इन आन्दोलन में गोवा में तिरंगा फहराया गया और गोवा आजाद हुआ। १५ अगस्त १९५५ के दिन गोवा में सत्याग्रही पहले पुना केशरी भवन में एकत्रित हुए और चार–चार की टोली में गोवा में प्रवेश करने की योजना बनाई। योजनानुसार १३ अगस्त १९५५ में लगभग एक हजार सत्याग्रही बेलगाँव पहुँचे। बेलगाँव से चार–चार की टोलियों में सत्याग्रहियों ने गोवा की सीमा में प्रवेश किया। सत्याग्रही आगे बढ़ते जा रहे थे और गोवा की पुलिस उन पर निर्दयता पूर्वक गोलियाँ चला रही थी। राजाभाऊ महाकाल की टोली भी तिरंगा लेकर आगे बढ़ रही थी। सामने से पुर्तगालियों की पुलिस द्वारा लगातार गोलियाँ चलाई जा रही थी। एक गोली राजाभाऊ महाकाल के सिर पर लगी अधिक खून बह जाने के कारण वे बेहोश होकर गिर पड़े। १८ घण्टे तक मृत्यु से संघर्ष करते हुए वे वीरगति को प्राप्त हुए। आन्दोलन में एक ही दिन में दो सौ सत्याग्रही गोलियाँ खाते हुए वीर क्रांतिकारी राजाभाऊ महाकाल भारत माता की जय कह कर हाथ में तिरंगा लेकर बोलते हुए शहीद हो गए।

• **सतना (म.प्र.)**

।। कर्नाटक की सिंहनी ।।

कित्तूर की महारानी

• शिवकुमार गोयल

कर्नाटक की एक छोटी सी रियासत थी 'कित्तूर'। वहाँ के महाराजा मल्लसर्ज की रानी 'चेनम्मा' अत्यंत साहसी व वीर महिला थी।

महाराजा मल्लसर्ज अचानक बीमार हुए तो उन्होंने सन्तान के अभाव में मास्न मारडीगौड़ा के पुत्र को गोद लिया। उसका नाम ''गुरु लिंग मल्लसर्ज'' रखा गया। महाराजा ने उत्तराधिकार पत्र में लिख दिया– ''मेरे बाद रानी चेन्नम्मा राजकुमार के युवा होने तक राजकाज का काम देखेंगी।''

महाराजा की मृत्यु होते ही कुछ राष्ट्रद्रोहियों ने राज्य के विरुद्ध षड़यंत्र रचना शुरु कर दिया। ईस्ट इंडिया कम्पनी के अंग्रेज अधिकारियों ने धारवाड़ के कमिश्नर मि. थैकरे से विचार विमर्श किया तथा रानी के दरबार में आदेश भिजवा दिया कि कम्पनी गुरुलिंग मल्लसर्ज को महाराजा का वारिस स्वीकार नहीं करती है।''

रानी चेन्नम्मा ने जैसे ही आदेश सुना कि उनका चेहरा क्रोध से लाल हो उठा, आँखों से चिनगारिया निकलने लगीं। उन्होंने भरे दरबार में आदेश के टुकड़े–टुकड़े कर डाले और सिंहनी की तरह दहाड़ उठीं– ''अंग्रेज कौन होते है मेरे राज्य के मामले में दखल देने वाले? कित्तूर मेरा है। मेरी प्रजा का है। उसमे अंग्रेज के पापी पैरों को कभी भी न पड़ने दूंगी।''

रानी ने ईस्ट इंडिया कम्पनी के दूत मल्लप्पा से साफ–साफ कह दिया कि वह वहाँ जाकर सूचना दे दे कि कित्तूर के मामले में किसी भी तरह का हस्तक्षेप स्वीकार नहीं किया जाएगा। उन्होंने कमीश्नर थैकरे साहब को पत्र लिखाया। कि कम्पनी सरकार को हमारे राज्य के उत्तराधिकार के बारे में बोलने का अधिकार नहीं है। हम अपने घरेलू मामले में किसी भी बाहरी ताकत का कदापि दखल सहन नहीं करेंगे।''

रानी जानती थी कि अंग्रेज उसका जवाब सुनकर चुप होकर कदापि न बैठेंगे। वे मौका किलते ही कित्तूर पर हमला कर उसे हड़पने की कोशिश करेंगे। अतः रानी ने अपने सेनापति, मंत्री तथा अन्य परामर्शदाताओं से विचार–विमर्श कर पूर्ण राज्य में सूचना भिजवा दी कि राज्य का हर नागरिक कित्तूर की रक्षा के लिए कमर कस ले। हम मरना पसंद करेंगे, परन्तु विदेशी विधर्मी अंग्रेजों की दासता कदापि स्वीकार न करेंगे।''

राज्य के पुरुषों ने ही नहीं महिलाओं ने भी सैनिक शिक्षा लेनी शुरु कर दी। तुलजा नामक युवती अन्य युवतियों को शस्त्र चलाने का प्रशिक्षण देने लगी। अवकाश प्राप्त सैनिक स्वयं सेना में भर्ती होने लगे।

रानी चेन्नम्मा ने पूरे राज्य के हर गाँव का स्वयं दौरा किया। उन्होंने प्रजा को पूरी घटना व अंग्रेजों की चाल से अवगत कराया। गाँव–गाँव में सैनिक तैयारी होने लगी। सभी लोग अंग्रेजों से दो–दो हाथ करने की प्रतीक्षा करने लगे।

राज्य के बेलहोंगल स्थान के जमींदारों ने तो अपने पुरखों की दोनों तोपें तथा बन्दूकें कित्तूर की रक्षा के लिए समर्पित कर डालीं।

१९ नवम्बर, १८२४ की प्रातः कमिश्नर थैकरे गोरों की सेना लेकर कित्तूर की ओर रवाना हो गया। कित्तूर की सीमा से बाहर सेना ने पड़ाव डाल लिया। थैकरे ने समझा कि इतनी बड़ी फौज देखकर रानी का दिल दहल जाएगा। अतः उसने एक संदेश भेजा कि यदि रानी बातचीत के लिए तैयार हो तो अभी भी लड़ाई से बचा जा सकता है। परन्तु रानी ने उसका कोई उत्तर ही नहीं दिया।

दूसरे दिन रानी ने नहाने के बाद माँ दुर्गा की पूजा की, महाराजा मल्लसर्ज की तलवार फैंटे से बांधी और घोड़े पर चढ़कर किले के सिंहद्वार पर जा पहुँची। राज्य की सेना किले की रक्षा के लिए घेराबन्दी कर चुकी थी।

थैकरे सेना के साथ किले के बाहर पड़ाव डाले हुए था। उसने फाटक के पास आकर रानी को आतंकित करने के लिए राज्य की ईंट से ईंट बजा देने की धमकी दी।

रानी चेन्नम्मा गरज उठी– ''थैकरे साहब, कित्तूर की प्रजा ने कभी भी किसी की आधीनता स्वीकार नहीं की

है। वहाँ का बच्चा बच्चा कट मरेगा परन्तु अंग्रेजों की अधीनता स्वीकार कदापि नहीं करेगा।''

रानी ने गुरु सिद्दप्पा तथा सेनापति से सलाह कर योजना बनाई। निश्चय किया गया कि अचानक किले का फाटक खोलकर अंग्रेजों पर प्रचण्ड आक्रमण किया जाए।

'हर–हर महादेव' तथा 'जय भवानी' के उद्घोषों से आसमान गूंज उठा। चरमराहट की आवाज के साथ किले का मुख्य फाटक खुला और वीर लड़ाके अंग्रेजों पर टूट पड़े। क्षणभर में ही उन्होंने अंग्रेजों को तलवार व भालों से काटना शुरु कर दिया। किले के बाहर का मैदान गौरों की लाशों से पटने लगा।

रानी घोड़े पर सवार हुई तलवार से अंग्रेजों पर वार कर रही थी। वह जिधर को निकल जाती गोरे सैनिकों का सफाया हो जाता। कमिश्नर थैकरे ने यह दृश्य देखा तो देखता ही रह गया। उसने देखा कि केवल रानी ही नहीं अन्य अनेक युवतियाँ भी तलवार हाथ में लिए अंग्रेजों से युद्ध कर रही हैं।

थैकरे ने रानी पर बन्दूक का निशाना लगाया, परन्तु वह खाली गया। बालप्पा नामक सैनिक ने बन्दूक से थैकरे पर गोली दाग दी। थैकरे वहीं लुढ़क गया। अंग्रेजों की सेना ने यह देखा तो उसके पैर उखड़ गए। अनेक अंग्रेज बन्दी बना लिये गए। शेष भाग गए। मल्लप्पा शेट्टी तथा वेंकटराय जैसे देशद्रोही भी अंग्रेजों की सेना के साथ थे। उन्हें भी बन्दी बना लिया गया।

थैकरे के नेतृत्व में अंग्रेज सेना के पतन की खबर पाकर अंग्रेज बैचेन हो उठे। दक्षिण भारत के सेनापति चैपलिन ने स्वयं कित्तूर जाकर वहाँ की ईंट बजा देने की शेखी बघारी।

चैपलिन सेना व तोपें लेकर कित्तूर जा पहुँचा। उसने शिववासप्पा को कित्तूर का शासक बनाने का लोभ देकर अपनी ओर मिला लिया। इस देशद्रोही से चैपलिन को कित्तूर के किले व सेना के बारे में बहुत सी जानकारी मिल गयी।

कर्नल वाकर, कर्नल डीकन तथा मेजर पामर आदि अंग्रेज अधिकारी किले के सामने मोर्चाबन्दी किए हुए थे।

अंग्रेजों ने तोपों से किले पर गोले बरसाने शुरु कर दिए। किले के अन्दर की तोपें भी गड़गड़ाहट के साथ अंग्रेजों पर गोली बरसाने लगीं। रानी स्वयं तोपों का निरीक्षण कर तोपचियों का उत्साह बढ़ा रही थीं।

कित्तूर की तोपों ने अंग्रेजों की तोपों को शांत कर दिया परन्तु किले का बहुत सा भाग अवश्य क्षतिग्रस्त हो गया। कर्नल डीकन तोप के गोले से झुलस गया जबकि चैपलिन घायल हो गया।

दूसरे दिन तीन नई पलटनें आ जाने से अंग्रेजों ने फिर मोर्चा लगाया। लैफ्टिनेंट कर्नल मैकलियड बड़ी तोपों के साथ किले के बायीं ओर जमा हुआ था। दुश्मन की बड़ी तोपें बड़े–बड़े गोले किले पर फेंक रही थीं। गोलों से किला ध्वस्त होता जा रहा था तथा कुछ गोले अन्दर पहुँचकर सैनिकों को

क्षति पहुँचा रहे थे।

अब अंग्रेज फाटक तक पहुँच चुके थे। यह दृश्य देखकर रानी का प्रमुख सिपहसालार दिलेर खाँ सैनिकों को साथ लेकर बाहर निकला और अंग्रेजों पर टूट पड़ा। उसने तलवार से गोरों के सिर उड़ाने शुरु कर दिए। वह तलवार घुमाता जिधर निकल जाता काई सी फट जाती।

इसी बीच मेजर टू मैन ने दिलेर खाँ को निशाना बनाकर बन्दूक से गोली दाग दी।

रानी चेन्नम्मा अब समझ चुकी थीं कि दुश्मन की भारी ताकत के आगे अधिक समय तक नहीं टिका जा सकता। उन्होंने गुरु सिद्वप्पा से कहा– ''आप राजकुमार तथा महिलाओं को किले के गुप्त द्वार से निकालकर सुरक्षित स्थान पर ले जाएं। इतने में मैं शत्रु को मात देने का अंतिम प्रयत्न करके देखती हूँ।''

रानी ढाई सौ घुड़सवारों के साथ दुर्ग के फाटक पर आई। संकेत पर फाटक खोल दिया गया। ''हर हर महादेव'' के उद्घोषों के बीच रानी अपने सैनिकों के साथ गोरों पर टूट पड़ी।

रानी के दोनों हाथों में तलवारें थीं। वह बिजली की सी फुर्ती के साथ गोरों पर टूट पड़ती और देखते ही देखते गोरे गाजर मूली की तरह कट–कट कर जमीन पर गिर जाते।

मेजर मुनरो ने रानी को गोली का निशाना बनाना चाहा, परन्तु रानी ने घोड़े को एड़ लगाई और वह मुनरो के बिलकुल पास थी। रानी की तलवार के एक ही वार ने मेजर मुनरो का सिर धड़ से अलग कर डाला।

अब रानी मेजर टू मैन के सामने थी। उसने देखते ही देखते टू मैन की टुकड़ी के आधे से ज्यादा गोरों को यमलोक पहुँचा दिया।

रानी इस भीषण युद्ध में गोलियों से घायल हो चुकी थी। अचानक उसके घोड़े को एक गोली ने धराशायी कर डाला। घायल हो जाने के बाद कर्नल स्पिलर ने रानी को बन्दी बना लिया।

अंग्रेजों ने कित्तूर में खुलकर लूटमार शुरू कर दी। कित्तूर के सभी प्रमुख सैनिकों को फांसी पर चढ़ा दिया गया। रानी को जैसे ही यह समाचार मिला, तो वह विह्वल हो उठी।

२१ फरवरी, १८२५ का दिन था। रानी को मैदान में ले जाकर तोप के सामने खड़ा कर दिया गया और इस महान वीरांगना ने ''जय भवानी'' के उद्घोष के साथ हँसते–हँसते मृत्यु का वरण कर भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में वीरता का एक और स्वर्णिम अध्याय जोड़ दिया।

बलिदान कभी कोई भी व्यर्थ नहीं जाता
जी उठता उसका देश, बीर यदि मरता है।
असफल रहती हैं सदियाँ उसे भुलाने में
वह सदियों की यादों से नहीं उतरता है।

बलिदान किसी के व्यर्थ नहीं जाया करते
चेतना लहर अनुपम, बलिदान उठाते हैं।
जब राष्ट्र किसी तन्द्रा में बेसुध होता है
बलिदान रक्त- सिंचन कर उसे जगाते हैं।।

– महाकवि श्रीकृष्ण सरल

।। महाराष्ट्र के क्रांतिवीर ।।

चाफेकर बन्धु

• दिनेश दर्पण

बात उस समय की है जबकि हमारा देश अंग्रेजों का गुलाम था। वह जनता पर अत्याचार करते थे। २२ जून १८९७ को महारानी विक्टोरिया के राज्यारोहण की सातवीं वर्षगाँठ बड़ी धूमधाम से गवर्नमेंट हाऊस में मनाई जा रही थी। उत्सव की समाप्ति पर रात्रि में मिस्टर रेंड अपने एक मित्र आर्यस्ट के साथ उत्सव वे घर आ रहे थे कि अचानक एक सनसनाती हुई गोली चिंघाड़ी और दूसरे ही पल जनता का दुश्मन मिस्टर रेंड धरती पर छटपटाता हुआ नजर आया। लेफ्टिनेंट आर्यस्ट जान बचाकर भागने लगा, मगर दूसरी गोली ने उसे भी धराशायी कर दिया। दामोदर चाफेकर ने मि. रेंड का और बालकृष्ण चाफेकर ने ले. आर्यस्ट का काम तमाम किया। ४ मई, १८९७ के अपने समाचार पत्र केसरी के अंक में बाल गंगाधर तिलक ने भी अंग्रेजी सरकार के मनमाने अन्यायपूर्ण अमानुषिक, पाशविक नृशंस अत्याचारों की निंदा की थी।

दामोदर चाफेकर और बालकृष्ण चाफेकर दोनों भाईयों को गिरफ्तार कर लिया गया और इसके साथ ही इसके तीसरे साथी को भी गिरफ्तार कर लिया गया। लोहे में लकड़ी लगाये बिना वह कुल्हाड़ी नहीं बनती जिससे लकड़ी को काटा जा सके। अपने देश में जयचंदों की कमी और मीरजाफरों की कभी भी कमी नहीं रही है। किसी लालच या भय से तीसरा साथी गवाह बन बैठा।

चाफेकर बन्धुओं का तीसरा भाई दस वर्षीय देवव्रत चाफेकर था। जब उसने यह समाचार सुना तो वह प्रतिहिंसा की अग्नि से तिलमिला उठा। उसकी नसों में खून खौलने लगा। उसने विश्वासघाती को सबक सिखाने का निश्चय कर। अब उसे हर समय प्रतिकार, प्रतिशोध अथवा बदला लेने की धुन सवार हो गई। उसने घर जाकर माँ के चरणों में अपना शीश झुकाया और बोला– माँ! तुम्हारी कोख के दो फूल भारत माँ के चरणों में अर्पित होकर अपने जन्म और तुम्हारी कोख को धन्य कर रहे हैं फिर मैं उस सौभाग्य से वंचित होकर क्यों तुम्हारी कोख को लजाऊँ? मैं भी भारत माँ के चरणों में अपना जीवन अर्पित करूँगा, माँ मुझे आशीर्वाद दो।

माँ के मुँह से एक भी शब्द नहीं निकला। उसकी आँखें डबडबा गईं। उसके होठों पर हल्दी सी मुस्कान खिल उठी। उसका मस्तक गर्व से तन गया। उसने बेटे के सिर पर स्नेह भरा हाथ फेरा और उसका मुख चूम लिया। इस प्रकार माँ की अनुमति और मौन आशीर्वाद प्राप्त कर देवव्रत चाफेकर चल पड़ा। देशद्रोही को उसकी करनी का फल चखाने के लिए उसने भरी अदालत में देशद्रोही मुखबिर को अपने गोली का निशाना बनाया और एक... दो... तीन ... गोलियाँ दनादन उसके कलेजे में उतार दी। लोगों के देखते ही देखते सरकारी गवाह मर चुका था। परिणाम स्वरूप वही हुआ जो होना था तीनों भाईयों को फाँसी की सजा सुनाई गई। तीनों भाई मुस्कराते हुए भारत माता की जय जयकार करते हुए फाँसी के फंदे पर झूल गये और अपने बलिदान से देश का मस्तक ऊँचा कर गए।

• तराना (म.प्र.)

।। उत्तर प्रदेश की मर्दानी।।

लक्ष्मीबाई

• वीर विनायक सावरकर

रानी ने अपना सैनिक गणवेश धारण किया, अच्छे घोड़े पर सवार हुई, रत्न जटित खड्ग को म्यान से बाहर निकाला और सैनिकों को 'आगे बढ़ो' की आज्ञा दे दी। कोटा की सराय के आसपास, जिसकी रक्षा का भार उन पर था, मोर्चा बन्दी की। जब अंग्रेज सेना का चारों तरफ से जोर देखा तो रण के बाजों के साथ सैनिक अंग्रेज सेना पर टूट पड़े। काश, उनके पास उनके समान ही धैर्यवान सेना होती। उनके नेतृत्व में उद्दंड और भीरु भी अनुशासित वीर बन जाता, उनके तथा अपने सैनिकों के साथ रानी ने अंग्रेजों पर हमला किया। लक्ष्मीबाई की दो सखियां मंदार और काशी भी रानी के कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़ीं। पुरुषवेश से विभूषित इन दो सुन्दर कन्याओं की स्मृति रानी लक्ष्मीबाई के साथ-साथ भारतीय इतिहास के जीवन में अमरत्व प्राप्त करेगी। स्मिथ जैसा जनरल रानी की सेना को दबा रहा था, किन्तु रानी का साहस और शौर्य देखते ही बनता था। पूरे दिन विद्युत सी रणभूमि में घूम रही थीं। उसकी हरावल पर अंग्रेज जोरदार हमले करते, किन्तु हर बार वह अपने पक्ष को विचलित न होने देती और उसका दल जोश में आकर अंग्रेजों की हरावल पर धावा बोल देता और अंग्रेज मौत की गोद में विश्राम पाते। अन्त में स्मिथ को पीछे हटना पड़ा, उसने चट्टान सी खड़ी हरावल को तोड़ने की कोशिश रोक दी।

इस तरह वह दिन बीता। १८ जनवरी १८५७ तारीख का सूरज निकला। आज अंग्रेजों ने बड़े जोड़-तोड़ से हमला करने का निश्चय किया। जिस स्मिथ को कल पीछे हटना पड़ा था, वह नई कुमक से झाँसी की सेना पर टूट पड़ा। ह्यूरोज ने समझ लिया कि उसका वहाँ होना आवश्यक है, इसी विचार के कारण आज के हमलावर सैनिकों के साथ वह स्वयं था। रानी भी अपनी सेना के साथ तैनात थी। उस दिन रानी ने कामदार चंदेरी की पगड़ी पहनी, चोगा और पायजामा पहना और गले में एक मोतियों का हार पहनकर घोड़े पर सवार हुई। उसका घोड़ा उस दिन कुछ थका हुआ सा मालूम देता था। अतः एक दूसर नया घोड़ा लाया गया। रानी की दोनों सखियाँ शरबत पी रही थी। तभी संवाद मिला कि अंग्रेजी सेना बढ़ी चली आ रही है। रानी तुरंत अपने खेमे से दौड़ पड़ी- तीर भी इतनी तेजी से नहीं छूटता। रानी ने घोड़ा दौड़ाया और तलवार हाथ में लेकर शत्रु पर धावा बोल दिया। इसी विषय में एक अंग्रेज लिखता है - ''तत्काल वह सुन्दरी मैदान में उतरी और ह्यूरोज के व्यूह का डटकर सामना किया। अपनी सेना के आगे रहकर पूरी मारकाट

करवाती, यद्यपि उसकी सफों को चीरकर अंग्रेज जाते, फिर भी रानी हरावल में दिखाई पड़ती थी और अपनी टूटी पांतियों को फिर से संगठित कर अतुल धैर्य का परिचय देती थी। इसके बावजूद ह्यूरोज ने स्वयं अपने ऊँट दल के जोर पर आखिरी पंक्ति तोड़ ही दी तो भी रानी अपने स्थान पर डटी रही।''

इतने असाधारण शौर्य से लड़ते हुए उसने देखा कि अंग्रेज सेना पीछे से आक्रमण कर रही है, क्योंकि पिछाड़ी से रक्षा करने वाली क्रांतिकारियों की पंक्तियों को उसने तोड़ दिया था। तोपें ठण्डी पड़ी थीं। मुख्य सेना तितर-बितर हो गई थी, विजयी अंग्रेज सेना रानी पर चारों तरफ से हमला बोल रही थी और रानी के पास केवल १५-२० सवार थे। रानी ने अपनी दोनों सखियों के

साथ घोड़े को एड़ लगाई। शत्रु की पंक्तियों को चीर वह परले सिरे पर होने वाले लोगों से मिलना चाहती थी। गोरे घुड़सवार शिकारी कुत्तों की तरह उसका पीछा कर रहे थे। किन्तु रानी ने तलवार के बल पर अपना मार्ग बनाया और आगे बढ़ीं... और सहसा एक चीख सुनाई- ''बाई साहब मैं मरी!'' उफ् यह किसकी पुकार! रानी ने घूम कर देखा। उसकी सखी मुंदर को एक अंग्रेज ने गोली मारी थी। वह मर गई। बिजली की गति से दौड़कर एक ही बार में उस फिरंगी के दो टुकड़े रानी ने कर दिए। मुंदर का प्रतिशोध ले लिया। अब घूमकर आगे बढ़ी। मार्ग में एक नाला आया। बस घोड़े की एक छलांग से रानी अंग्रेज के चंगुल से मुक्त थी। किन्तु नया घोड़ा वहीं अड़ गया। नाला पार करने से उस बेवफा घोड़े ने इन्कार कर दिया। काश आज उनका वही पुराना घोड़ा होता। मानो किसी जादुई असर के प्रभाव से वह घोड़ा गोल चक्कर काटने लगा। क्षण भर में ही गोरे सैनिक रानी के करीब आ गए और इस घिरी हुई अवस्था में एक तलवार ने अनेक तलवारों का सामना किया। पर एक एक ही है, उन बहुत से अंग्रेजों में से एक ने पीछे से सिर पर वार किया और उस वार के साथ सिर का दाहिया हिस्सा और दायीं आँख निकलकर बाहर लटकने लगी- उसी समय दूसरा वार छाती पर हुआ। महालक्ष्मी! अब तुम्हारे रक्त की पावन बूंद-अखिरी बूंद टपकने वाली है। स्वतंत्रता की देवी को उसने अन्तिम बलि दी। अपने ऊपर वार करने वाले अंग्रेज के टुकड़े कर डाले और अब रानी अन्तिम सांस लेने लगी। रानी का विश्वासपात्र नौकर रामचन्द्रराव देशमुख पास ही था। उसने रानी को उठाया और पास की झोंपड़ी में उसे ले गया। बाबा गंगादास ने रानी को ठंडा पानी पिलाया और बिछौने पर लिटा दिया। रक्त से लथपथ शरीर को उस देवी ने बिस्तर पर लिटा दिया और उसकी पावन आत्मा स्वर्ग सिधार गई। अन्तिम साँस से निकले अपनी स्वामिनी की अन्तिम सूचना के शब्दों के अनुसार रामचन्द्रराव देशमुख ने शत्रु की आँख बचाकर घास का ढेर लगा दिया और उसी चिता पर लिटाकर, पराधीनता के अपवित्र स्पर्श के भय से अग्नि संस्कार कर डाला।

सिंहासन पर नहीं, चिता पर लक्ष्मी के गले में स्वतंत्रता की कौस्तुभमणि विराजमान है। रणभूमि में उत्सर्ग करके रानी ने मृत्यु का दरवाजा तोड़ दिया है। अब भला कोई मानव उसका क्या पीछा करेगा?

इस प्रकार रानी लक्ष्मीबाई लड़ी। अपना लक्ष्य पूरा कर गई। ऐसा एक जीवन सम्पूर्ण राष्ट्र का मुख उज्ज्वल करता है। वह सब सद्गुणों का निचोड़ थी। एक महिला, जिसने जीवन के २३ वसंत ही देखे थे, कोमलांगी, मधुर, विशुद्ध चरित्र, पुरुषों में भी न पायी जाने वाली संगठन कुशलता से ओतप्रोत थी। उसके हृदय में देशभक्ति रत्नदीप की तरह प्रकाशमान थी। अपने देश भारत पर उसे गर्व था। युद्ध कौशल में अद्वितीय थी। विश्व में शायद ही कोई ऐसा देश होगा, जो ऐसी देवी को अपनी कन्या कहने का अधिकारी होगा। इंग्लैंड के भाग्य में यह सम्मान अब तक नहीं बढ़ा है। इटली की क्रांति में ऊंचे शौर्य और आदर्श का परिचय मिलता है, फिर भी इतने वैभवपूर्ण समय में इटली एक लक्ष्मी को पैदा नहीं कर सका।

भारत का यह अहोभाग्य है कि ऐसा स्त्री रत्न यहाँ पैदा हुआ। उसका शरीर बाबा गंगादास की झोपड़ी में प्रज्ज्वलित ज्वाला में दमक रहा है। पर यह रत्नदीप हमारी मातृभूमि कदाचित् पैदा न कर सकती यदि यह स्वतंत्रता संग्राम का महायज्ञ न रचा जाता। अनमोल मोती सागर की सतह पर ही नहीं मिल जाते। रात्रि के अन्धकार में सूर्यकान्त मणि किरणें नहीं फेंकती। चमक पत्थर कोमल वस्तु की रगड़ पर चिंगारी उत्पन्न नहीं करता। इन सबको विरोध की उपेक्षा होती है। अन्याय से पिसे हुए मन को बैचेन बना दो– अन्दर तक, रक्त की एक–एक बूंद में उबाल आना चाहिए। अन्याय का ईंधन प्रतिशोध की भट्टी को तपाता रहे, ऐसी भट्टी में फिर सद्गुणों के कण चमकने लगते हैं।

१८५७ में हमारी भूमि पर सचमुच ही आग भड़क उठी थी और फिर विश्व के कानों में गूँज भरने वाला धमाका... इस अग्नि का कितना विस्तृत फैलाव हुआ है। ऊँची लपट–लपट में से लपट मेरठ में चिंगारी और डलहौजी के रोलर से समतल बना धूल का ढेर–सारा देश ज्वालामुखी बारुद के अम्बार सा दिखाई पड़ा। जैसे आतिशबाजी का अनार खुलने पर उसमें से रंग–बिरंगे बाण पेड़ तथा अन्य चीजें छूटती हैं और शान्त हो जाती है। उसी तरह इस क्रांति के अनार से तप्त लहू बहा, शस्त्रास्त्र और मुठभेड़ें निकलीं। और यह अनार भी कितना बड़ा मेरठ से विन्ध्याचल तक लम्बा, पेशावर से डमडम तक चौड़ा, और से सुलगाया गया। आग की लपटें सभी दिशाओं में व्याप्त हो गई और उस अनार के पेट में क्या–क्या अजीब चीजें थी। लहू मेघ की तरह बरसा– ओलों के साथ। दिल्ली के घेरे, प्लासी के प्रतिशोध, कानपुर, लखनऊ तथा सिकन्दराबाद के कत्ल। सहस्रों वीर जूझ रहे हैं, खप रहे हैं, नगर जल रहे हैं कुंवरसिंह आता है, जूझता है, गिरता है, मौलवी आया, लड़ा और मरा, कानपुर, लखनऊ, दिल्ली, बरेली, जगदीशपुर, झाँसी, बाँदा, फर्रुखाबाद के सिंहासन, पाँच हजार, दस हजार, सहस्रों, लाखों तलवारें, ध्वजाएँ, झंडे, सेनापति, घोड़े, हाथी, ऊँट सब इस अनार से बाहर एक के बाद एक आग के फव्वारे से निकलते हैं। एक कुछ ऊँचाई कल लपट कर कुछ दूसरी पर ये ऊँचे चढ जाते हैं, लड़खड़ाते हैं और लुप्त हो जाते हैं। सब ओर लड़ाई बिजली की कड़क, ज्वालामुखी की भीषण ज्वालाओं का यह फव्वारा।

और यह चिता बाबा गंगादास की झोपड़ी के पास जल रही है। १८५७ के स्वातंत्र्य समर के ज्वालामुखी की यह अन्तिम ज्वाला है।

अल्लूरी सीताराम राजू

• संकलित

(रात का समय। घर में दीप जल रहा है। मंद प्रकाश में सात–आठ वर्ष का एक बालक कमरे में बैठा है। सामने अभ्यास की पुस्तक है। पास ही माँ बैठी है, पुत्र को पढ़ा रही है।)

माँ– ''बेटा सुनो, एक व्यापारी एक रुपया में एक के भाव से १२ औषधि की शीशियाँ खरीदता है। बाद में तीन रुपये में एक के भाव से उन्हें बेचता है, तो उसे कितना लाभ हुआ?''

एक दो मिनट सोचकर बच्चे ने पूछा, ''माँ वह कौनसी औषधि थी?''

''अरे उससे क्या मतलब। सीधा उत्तर बताओ।''

''उत्तर तो उसी में है माँ। बताओ न, वह कौनसी औषधि थी?''

''समझो कोई जान बचाने वाली औषधि।''

लड़के ने झट से खड़े होकर कहा ''बताऊँ उत्तर?''

''हाँ बताओ।''

'' उस व्यापारी को बारह बेंत लगाने चाहिए,'' तपाक से उसने कहा।

माँ एकदम स्तब्ध होकर देखने लगी।

''यह क्या उत्तर है? निरी बकवास।''

''नहीं माँ, प्राण बचाने वाली औषधि को इतना अधिक लाभ लेकर बेचा तो गरीब उसे कैसे खरीदेगा? उस लालची व्यापारी को बारह बेंत लगाना ही उचित होगा।''

यह विचित्र उत्तर देने वाले बालक को सभी राजू कहते थे। उनका पूरा नाम था रामराजू। बड़ा होकर अल्लूरी सीतारामराजू के नाम से वह प्रसिद्ध हुआ। उनकी माँ का नाम था नारायणम्मा व पिता का नाम था वेंकटरामराजू।

आंध्र प्रदेश में नरसापुर नाम का एक जिला है। उस जिले में गोदावरी नदी के पश्चिम में मोगल्लु नाम का एक गाँव है। ४ जुलाई १८९७ को रामराजू का जन्म वहीं हुआ था।

पिता वेंकटरामराजू महान देशभक्त थे। वे एक ख्यातनाम चित्रकार भी थे। उनके घर की दीवारें उनसे चित्रित महान देशभक्तों के चित्रों से सुशोभित थीं। श्रीराम, श्रीकृष्ण, हनुमान, प्रह्लाद, ध्रुव, राणा प्रताप, शिवाजी, आन्ध्र के वीर बालचन्द्र, रानी रुद्रम्मा, खड्गतिक्क आदि के चित्रों से घर सजाया गया था। घर में उठते–बैठते, सोते–जागते इन्हीं चित्रों का दर्शन हुआ करता था। ऐसे पवित्र परिसर में राजू बड़ा हुआ।

राजू का बाल्यकाल कुछ समय तक मोगल्लु में बीतने के बाद, वह परिवार राजमहेन्द्री में आकर रहने लगा।

संध्या का समय था। मंद शीतल हवा बह रही थी। राजू पिता के साथ नदी के किनारे टहलने गया था। हमेशा के अनुसार वहाँ पर घूमने वालों की भीड़ थी। अचानक घोड़ों के टापों की ध्वनि सुनाई दी। सभी का ध्यान उधर गया। देखते–देखते एक बड़ा घोड़ा उसी दिशा में दौड़ते

हुए आया। उस पर एक अंग्रेज सैनिक सवार था। लोग घबराकर हट गए। वह एक सैनिक अधिकारी था। उसके चमकते लाल रंग के वस्त्र, चमकता हुआ पट्टा, सिरपर तुर्रे वाली हेट देखकर वहीं पर खेल रहे कुछ बालक खुशी में ''सलाम–सलाम'' चिल्लाने लगे। राजू को भी उत्साह आ गया। उसने भी एकदम सिपाही के सामने खड़े होकर ''सलाम'' ठोक दिया।

पिताजी एकदम गंभीर हो गए। उनके चेहरे का हास्य लुप्त हो गया। क्रोध से आँखें अंगार हो गयीं। राजू के गाल पर एक के बाद एक चपत पड़ने लगी।

राजू ने चकित होकर पिताजी की ओर देखा और रोने लगा।

''मूर्ख! विदेशी के सामने सिर झुकाते हो? शर्म नहीं आती? तुम्हारा वंश कहाँ, संस्कृति कहाँ? वह कौन लगता है तुम्हारा? खबरदार फिर कभी ऐसा किया तो। जान से मार डालूंगा।''

रोते–रोते राजू ने कहा, ''नहीं पिताजी! फिर कभी ऐसा नहीं करूँगा।''

अपने ही लड़के को इतनी कठोर शिक्षा। स्वयं वेंकटरामराजू को बेहद दुःख हुआ। उन्होंने राजू को बाहों में समेट लिया। प्रेम से पुचकारते हुए कहा– ''बेटा! हमें कभी शत्रु के सामने सिर नहीं झुकाना चाहिए। सिर ऊँचा करके, सीना तानकर, रौब के साथ चलना चाहिए। यदि सिर झुकाना ही है तो केवल हमारी माँ भारत माता के सामने झुकाना।''

कुछ समय बाद राजमहेन्द्री में वेंकटरामराजू का स्वर्गवास हो गया।

राजू अब नरसापुर में उसके चाचाजी के यहाँ रहने लगा। वहीं के टेलर स्कूल में भरती हुआ। परन्तु राजू की स्वतंत्रता प्रवृत्ति उनके चाचा के स्वभाव से मेल नहीं खाती थीं। कभी–कभी दोनों में वाद–विवाद हो जाता था। एक दिन गुस्से में चाचाजी ने राजू को खूब डांटा। राजू को वह सहन नहीं हुआ। परन्तु राजू की स्वतंत्र प्रवृत्ति उनके चाचा के स्वभाव में मेल नहीं खाती थीं। कभी–कभी दोनों में वाद–विवाद हो जाता था। एक दिन गुस्से में चाचाजी ने राजू को खूब डांटा। राजू को वह सहन नहीं हुआ। चाचाजी का घर छोड़कर काकिनाडा चला गया। वहीं की धर्मशाला में रहकर, एक शाला में पढ़ने लगा।

शाला से बाहर – काकिनाडा समुद्र के किनारे पर है। रोज शाम को राजू समुद्र के किनारे घूमने जाता था। वहीं पर कुछ अंग्रेज भी रहते थे। उनके बच्चे भी वहाँ खेलने आते थे। काले लोगों के बच्चों का मजाक उड़ाना भी उन गोरे बच्चों के लिए एक खेल ही था। एक बार एक गोरा बच्चा दौड़ते हुए आया और वहीं बैठे राजू के सिर पर से कूदकर चला गया। राजू के शरीर में एकदम बिजली सी चमक उठी। राज महेन्द्री में नदी के किनारे पर पिताजी से सीखा पाठ का स्मरण हो आया। वह उसके लिए वेद–वाक्य था।

राजू ने तुरंत उस गोरे लड़के का पीछा कर उसकी गलपट्टी (टाई) से उसे पकड़ लिया। उससे छुटकारा पाने के उस लड़के के सभी प्रयास असफल रहे। राजू ने उसे दो–चार घूंसे लगाकर नीचे गिराया। उसकी छाती पर बैठकर दो–चार तमाचे और जड़ दिये। रोते–चिल्लाते वह लड़का घर गया और उसने अपने पिता से शिकायत की। उसके पिता ने गोरे साहब ने, राजू के बारे में उसकी शाला में शिकायत की। एक देशी लड़के ने अंग्रेज के बच्चे को अपमानित किया था। यह कैसे सहन होगा? राजू को शाला से निकाल दिया गया।

वहाँ से चलकर राजू तुनी गाँव में आया। वहाँ की संस्कृत पाठशाला में भरती हुआ। फुरसत के समय आसपास के जंगलों में, पहाड़ों में घूमा करता था। उसे वहाँ के सीधे–सादे वनवासियों के जीवन का परिचय हुआ। उनकी दारुण दरिद्रता वह दुखी होता था। बाद में राजमहेन्द्री के ए. वी. एस. कॉलेज में प्रवेश पाकर राजू ने उच्च शिक्षा ली। कुछ समय तक विशाखापट्टनम् में भी रहा।

उन दिनों विशाखापट्टणम् स्वातंत्र्य संग्राम का एक प्रमुख केन्द्र था। देश के चोटी के नेता वहाँ आते थे। सार्वजनिक सभाओं में उनका भाषण होता था। राजू वहाँ जाने से कभी भूलता नहीं था। देश की गंभीर परिस्थिति

उसके सामने आती थी। साथ ही पौरुष पराक्रम की भावना भी उसमें जाग्रत होती थी। मन अशांत हो जाता था।

राजू ने कॉलेज में जाना बन्द किया। उस समय उसकी आयु मात्र १७ वर्ष थी। उसके सामने यह समस्या थी कि आगे क्या किया जाए? संपूर्ण भारत का दर्शन करने की इच्छा हुई। प्रवास पर चल पड़ा। उन दिनों बंगाल व पंजाब में क्रांतिकारियों की हलचलें जोरों पर थीं। पंजाब में उसे कई क्रांतिकारियों का परिचय स्नेह प्राप्त हुआ। आंध्र में क्रांतिकारी कार्यक्रमों से अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र आन्दोलन करने की स्फूर्ति मिली।

यह देशदर्शन पूर्ण होते तक उसके स्वभाव में काफी परिवर्तन आया था। धार्मिक प्रवृत्ति जागृत हुई थी। देश की स्वतंत्रता के लिए लड़ने की तीव्र इच्छा निर्माण हुई थी। संन्यासी बनकर अपने जीवन को देशसेवा तथा जनसेवा के लिए समर्पित करने की उसने प्रतिज्ञा की।

*****

मान्यम नामक पहाड़ी क्षेत्र मे कोयर और चेन्चु जाति के वनवासियों में नरबली, मदिरापान एवं नृशंस दण्डों की कुप्रथाएँ बन्द करवाने में उसकी बड़ी भूमिका रही। उसने व्यसनमुक्त कोयरों में देशभक्ति जगाकर तरुणों की देश पर मर मिटने को तैयार सेना खड़ी कर ली। उन दिनों असहयोग आन्दोलन जोरों पर था। अपनी वनभूमि एपं वनों की रक्षा के लिए अंग्रेजी कानून तोड़ना आरंभ किए गए। राजू की प्रेरणा से अब आपसी झगड़ों को सुलझाने भी को कोई अंग्रेज अधिकारियों के पास नहीं जाता इससे अंग्रेजों के इन झगड़ों का लाभ उठाकर वनवासियों के अधिकारों पर डाके डालना बंद हो गए।

राजू की सेना में धनुषबाण, भाला, बरछी, तो थे पर अंग्रेजों की बन्दूकों, पिस्तौलों से सामना करने के लिए ये शस्त्र अपर्याप्त थे अतः राजू ने शत्रुओं को ही लूटकर शस्त्र जुटाने प्रारंभ किये।

अंग्रेजों को नाकों चने चबाना पड़ रहे थे। पूर्व से सूचना देकर उनके शस्त्र ही नहीं लूटे जा रहे थे उनके अधिकारी भी मारे जा रहे थे। राजू के गुप्तचर तंत्र के आगे अंग्रेजों की गुप्तचरी बेकार सिद्ध हो रही थी तिलमिलाए अंग्रेज ओर अंग्रेज भक्त राक्षसी अत्याचारों पर उतारु थे। वे मारते-पीटते, बलात्कार करते और प्राण तक ले लेते थे।

अन्ततः अत्याचारों को रोकने के लिए अंग्रेजों ने राजू को सन्धि की शर्त मानने को विवश कर दिया। अपने ही लोगों पर नृशंस अत्याचारों से मुक्ति हेतु ही राजू ने सन्धि स्वीकारने का निश्चय किया।

६ मई १९२४ ब्राह्ममुहूर्त में माँ काली की पूजा कर निशस्त्र राजू केवल एक बेंत लेकर पैदल ही चल पड़ा। रास्ते में ही मंपा गाँव के निकट पहरेदारों ने पहचान लिया और बन्दी बनाकर मेजर गुडाल के सामने प्रस्तुत किया। न कोई नैतिकता न वचन पालन सन्धि करने आए राजू को गुडाल ने वही इमली के पेड़ से बंधवा दिया।

राजू की सिंहगर्जना सुनकर धरती आकाश काँप उठे। तोप के गोले की भांति शब्द उसके मुँह से निकल रहे थे ''ऐ राक्षस! तुम मुझे मारने वाले हो? तुम सिर्फ एक राजू को मार सकोगे। भारत माता बांझ नहीं है उसके रत्न गर्भ से अनेक राजू पैदा होंगे। तलवार का उत्तर तलवार से देंगे। रक्त के बदले रक्त बहाएंगे। प्राण के बदले प्राण लेंगे। अन्ततः तुमको अपना बोरिया बिस्तर बांधना होगा। मेरा भारत स्वतंत्र होकर रहेगा।

''ठाँय ठाँय'' कुंजु मेनन की बन्दूक गरजी और राजू वन्दे मातरम् करते मातृभूमि की गोद में लुढ़क गया।

अल्लूरी सीताराम राजू की रक्तसनी देह मंपा गाँव से ६ मील दूर कृष्णादेवी पेठ ले जाया गया जहाँ सिद्धिपाल्यम् गाँव के विशेष अधिकारी रूदर फोर्ड के सामने उसे प्रस्तुत किया गया।

८ मई १९२४ को अन्तिम संस्कार किया गया। बाद में वहीं बनाई उसकी समाधि एक बलिदान तीर्थ बन गई। उसक त्याग व्यर्थ न गया। अन्ततः १५ अगस्त १९४७ को भारत माता स्वतंत्र हो गई।

॥ गुजरात का गौरव ॥

पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा

● पं. बाबूलाल जोशी

पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा केवल क्रांतिकारी ही नहीं वरन् प्रखर राष्ट्रवाद की पहचान थे। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के लिए केवल चिंगारी ही नहीं लगाई वरन् स्वतंत्रता की ज्योत लगाकर उसे प्रज्वलित भी की और वे राष्ट्रवादी युवकों के प्रेरणा स्रोत बने रहे। उनके द्वारा लगाई गई दहकती चिंगारी में अंग्रेजों की सत्ता खाक हो गई जिसके परिणाम स्वरूप स्वतंत्रता के सुखद परिणाम एक अरब से भी अधिक हिन्दुस्थानी आसानी से सहेज रहे हैं।

महान क्रांतिकारी, राष्ट्र रत्न और गुजरात के गौरव पुत्र श्यामजी कृष्ण वर्मा की जीवन यात्रा स्वतंत्रता की लड़ाई में प्रेरक चिन्ह बन गई और उनसे प्रेरणा पाकर अनेक क्रांतिवीरों ने स्वतंत्रता संग्राम के यज्ञ में अपने जीवन की आहुतियाँ प्रदान की।

श्यामजी वर्मा का जन्म ४ अक्टूबर १८५७ में गुजरात के कच्छ जिले के मांडवी शहर में श्रीकृष्ण वर्मा के घर हुआ था। वे बचपन से ही पढ़ने में होशियार थे। उन्हीं दिनों वहाँ मुम्बई के एक सेठ श्री मथुरादास भुज में आए थे उन्होंने श्यामजी की बुद्धिमता देखकर उन्हें अध्ययन के लिए मुंबई बुलाया। श्यामजी की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी ऐसे में यह न्यौता उनके लिए आशीर्वाद बन गया उन्होंने मुंबई के विल्सन हाई स्कूल में प्रवेश लिया। अध्ययन के साथ-साथ पं. विश्वनाथ शास्त्री की वेदशाला में उन्होंने संस्कृत की शिक्षा भी प्राप्त की। अध्ययन के दौरान उनका परिचय स्वामी दयानन्द सरस्वती से हुआ। दयानन्द जी के क्रांतिकारी विचारों ने धर्म प्रिय श्यामजी वर्मा के मानस में अदभुत परिवर्तन कर दिया और वे देशभर में घूम-घूम कर संस्कृत भाषा में वैदिक विचारों का प्रचार प्रसार करने लगे।

इंग्लैण्ड के आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के संस्कृत के प्राध्यापक मोनियर विलियम्स उन दिनों भारत आए हुए थे। वे संस्कृत अंग्रेजी शब्दकोश तैयार कर रहे थे। श्याम जी ने इस कार्य में उनकी सहायता की संस्कृत भाषा में उनका अदभुत ज्ञान देखकर विलियम्स बहुत प्रभावित हुए और आक्सफोर्ड

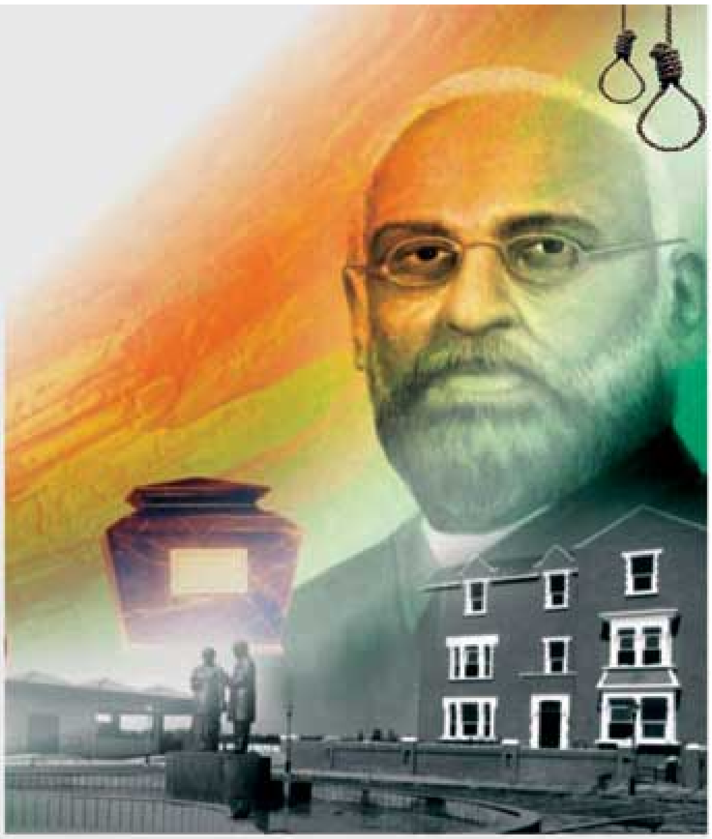

विश्वविद्यालय में संस्कृत के सह प्राध्यापक के रूप में उन्हें इंग्लैण्ड आने का निमंत्रण दिया।

इस प्रकार विदेशी धरती पर भारतीय धर्म आध्यात्म का प्रचार करने के द्वार खुल गए और साथ ही मातृभूमि को विदेशी दासता से मुक्त करने का मार्ग भी खुल गया। मगर आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण कुछ ही समय बाद वे भारत लौट आये। १८८४ में वे फिर इंग्लैण्ड गए उस समय उनकी पत्नी भानुमति भी साथ गई वहाँ पर उन्होंने पूर्व में अधूरी छोड़कर आए बेरिस्टर की पढ़ाई पूरी की और फिर स्वदेश लौट आए।

स्वदेश लौटने पर श्यामजी कृष्ण वर्मा का परिचय रतलाम के तत्कालीन दीवान गोपालराव देशमुख द्वारा रतलाम के महाराजा रणजीतसिंह से कराया गया महाराज रणजीतसिंह श्यामजी कृष्ण वर्मा की प्रतिभा एवं पांडित्य से अत्याधिक प्रभावित हुए और उन्होंने श्रीवर्मा को रतलाम राज्य का दीवान नियुक्त कर दिया। स्वयं गोपाल राव देशमुख भी अपनी वृद्धावस्था के कारण यही चाहते थे।

रतलाम के राजा रणजीत सिंह १८६४ से १८९३ तक रतलाम के शासक रहे थे इनके कार्यकाल में रतलाम के विकास सौन्दर्यीकरण की पहल शिक्षा तथा स्वास्थ्य पर समुचित प्रबंध व्यवस्था की शुरुआत तथा नियोजित तरीके

से जन सुविधाएँ उपलब्ध कराते हुए नगर की बसाहट खान बहादुर मुंशी शाहमत अली (१८६५ से १८८२ तक सत्रह वर्षीय कार्यकाल में) द्वारा हो चुकी थी। १८८५ से पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा के दीवान पद पर आने से रतलाम का औद्योगिक, व्यापारिक विकास तेजी से बढ़ा। रूई घर की स्थापना तथा सिक्का ढालने के लिए इंग्लैण्ड से मशीनें मंगवाई गई। सन् १८८८ में यह मशीन रतलाम आई। मशीन से एक पैसे का ताम्बे का सिक्का ढाला गया जिस पर रतलाम राज्य का प्रतीक चिन्ह हाथ में कटार लिए हनुमान तथा उसके नीचे देव नागरी लिपि में रतलाम लिखा हुआ होता था।

श्यामजी के कार्यकाल में जहाँ एक और आर्थिक सुधार की योजनाओं को मूर्तरूप दिया गया वहाँ सामाजिक दृष्टि से कुछ ऐसे कार्य सम्पन्न हुए जो रतलाम के लिए गर्व की बात है। अक्टूबर १८८७ में कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा पर तीन दिवसीय त्रिवेणी मेले की शुरुआत व्यवसायिक तथा कारीगरों की प्रगति को लेकर की गई थी। घरेलू-लघु उद्योगों के प्रोत्साहन की दृष्टि से प्रारंभ किए गए इस मेले में रतलाम निवासियों का योगदान रहा।

रतलाम से अपना कार्यकाल छोड़ने के उपरान्त कुछ समय श्री श्यामजी वर्मा ने मुम्बई में वकालत की। १८९२ में उदयपुर राजस्थान के दीवान बने। उसके बाद वे जूनागढ़ के भी दीवान रहे, लेकिन राज्यों के आन्तरिक मतभेदों के कारण उन्होंने त्यागपत्र दे दिया।

लेकिन श्यामजी वर्मा के मन में माँ भारती की दासता कुछ और करने को प्रेरित कर रही थी। इसलिए भारत की चारों ओर की परिस्थिति पर उनकी जीवटता लिए चौकसी भरी नजर रहती थी। गुलाम भारत और अनेक बड़े-बड़े राजे-रजवाड़े प्रजा पर राज कर रहे थे तो राजाओं रियासतों पर अंग्रेजों की हुकूमत की पकड़ चल रही थी। बड़े से बड़े राजा वायसराय के पास जाकर नतमस्तक होता था। स्वतंत्रता कहीं दिखाई नहीं दे रही थी। गरीबी मुँह बाएँ खड़ी अन्याय व अत्याचारों से पीड़ित जन मानस को देखकर वे द्रवित हो उठे तथा गुलाम भारत की दशा सुधारने के लिए कृत संकल्प हो उठे।

श्यामजी कृष्ण वर्मा दयानंद के राष्ट्रभक्ति पूर्ण क्रांतिकारी विचारों से अत्यंत प्रभावित तो थे ही उनकी भेंट लोकमान्य तिलक से हुई उसके बाद १९०५ में उन्होंने इंग्लैण्ड की राह पकड़ी और २० भारतीयों के साथ मिलकर श्याम जी वर्मा ने इंडियन होम रूल की स्थापना की उसका उद्देश्य था भारतीयों के द्वारा, भारतीयों के लिए भारत सरकार की स्थापना। तीन मंजिला भवन इंग्लैण्ड में खरीदकर उसका नाम भारत भवन रखा। यही भवन भारत मुक्ति के लिए एक क्रांति मंदिर बन गया। वहाँ स्वतंत्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर, मदनलाल धींगरा, लाला हरदयाल, सरदार राणा, मादाम कामा आदि की सशक्त शृंखला तैयार हुई।

श्यामजी का मंत्र था ''स्वतंत्रता का विजयनाद एक दिन में प्राप्त नहीं होता। स्वतंत्रता की वेदी तो कठोर तप और अग्नि परीक्षा मांगती है।'' यह एक प्रकार से क्रांतिकारियों का मार्गदर्शक बन गया। सात समुद्र पार से उनके विचारों की प्रतियाँ क्रांतिकारियों के हाथों में पहुँची और विदेशियों से लड़ने में सहायक बनी।

श्रीश्यामजी कृष्ण वर्मा की देशभक्ति की उत्कंठा तीव्र थी और आजादी के प्रति आस्था इतनी दृढ़ थी कि श्यामजी कृष्ण वर्मा ने अपनी मृत्यु के पहले यह इच्छा व्यक्त की थी कि मृत्यु के बाद उनकी अस्थियाँ स्वतंत्रत भारत की धरती पर ले जाई जाए। भारतीय स्वतंत्रता के १७ वर्ष पहले ३१ मार्च १९३० को उनकी मृत्यु जिनेवा में हुई किन्तु उनकी मृत्यु के ७३ वर्ष बाद (स्वतंत्र भारत के ५६ वर्ष बाद) भारत माता के इस सपूत की अस्थियाँ देश की धरती पर लाने की सफलता गुजरात राज्य सरकार को मिली। यह तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के संकल्प शक्ति से संभव हो पाया। २३ अगस्त २००३ को जिनेवा से मुम्बई एयरपोर्ट पर अस्थि कलश लाया गया और गुजरात में कोई लगभग १९९० किलोमीटर में आने वाले १७ जिला केन्द्रों, मुख्यतः बलसाड़, नवसारी, सूरत, भरूच, बड़ौदा, आणंद, खेड़ा, साबरकांठा, मेहसाणा, पाटण, गांधीनगर, अहमदाबाद, सुरेन्द्र नगर, राजकोट, पोरबंदर, जामनगर तथा कच्छ आदि में होते हुए वीराजंलि यात्रा का समारोह श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा के जन्मस्थान ग्राम मांडवी में ४ सितम्बर २००३ को हुआ। जिसमें राष्ट्रभक्ति, एकता, अखण्डता और बलिदान का संदेश देते हुए उनकी स्मृति में भव्य स्मारक स्थापित करने का संकल्प लिया गया। आज यह बलिदान तीर्थ हम सबको प्रेरणा दे रहा है।

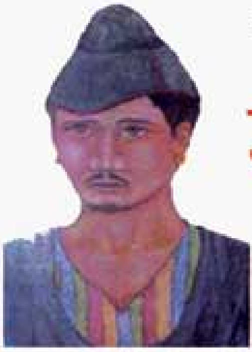

।। मेघालय का ज्यांतिया वीर ।।

उ कियांग नागवा

• बिपिन बिहारी पाराशर

३० दिसम्बर १८३२ में अंग्रेजों ने इनको फांसी लगाई उससे पूर्व वे एक ज्यांतिया समाज के लिए हँसते–हंसते एक संदेश देकर गये।

उन्होंने फाँसी लगने से पूर्व कहा ''मेरे भाईयो और बहनो! मेरे मुस्कुराते मुख मंडल को देखो, और गौर से देखो। तुम सबमें किसी को रोना नहीं चाहिए। रोओ भी मत हमारी धरती माँ की गोद में अनेक उ कियांग हैं। उ कियागों को मानव बनाओ, यह तुम्हारा कार्य देश के लिए है हिन्दू ज्यांतिया समाज के लिये है। फाँसी लगने से मेरा मुख पूर्व दिशा की ओर होगा, तो समझ लो हम सबको एक सौ वर्ष के बाद आजादी मिलेगी और पश्चिम दिशा की ओर हुआ तो समझो सैकड़ों वर्षों तक लम्बा युद्ध चलेगा।'' इसके बाद ३० दिसम्बर (१८३२ को दोपहर में फाँसी दे दी गयी।) जनाधार के मतानुसार उसका मुख पूर्व की ओर ही था।

३० दिसम्बर १८३२ को उ कियाग ने फाँसी पर चढ़कर अपना जीवनोत्सर्ग कर दिया।

ज्यांतिया समाज में भगवान का अर्थ है भगवान उगलायी।

वीर उ कियांग की माँ ने भगवान उगलायी से प्रार्थना कि मेरे देश के लिए उ कियांग को आशीर्वाद दे एवं शक्तिशाली बनावे ताकि वह अपने राज्य की सुरक्षा कर सके।

हमारे प्यारे खासी ज्यांतिया समाज को और हमारे राज्य को फिरंगी गुलाम बनाने के लिए कार्यरत हैं।

मैं फिरंगियों से अपनी भूमि को स्वतंत्र करा लूंगा यही मेरा संकल्प है। तुम धन्य हो पुत्र भगवान ने तुमको इसीलिए बनाया है। भगवान तुम्हारी सहायता करें।

१८३५ सन जोनायी कियांग नागवा मेघालय का एक वीर क्रातिकारी युवक था। जब इन पर्वतमालाओं में ब्रिटिश शासन नहीं था। ३५०० वर्ग मील में पहाड़ी क्षेत्र

खासी और ज्यांतिया पहाड़ियाँ थी। इन क्षेत्र में आज का बाग्लादेश शिल्चर में ३० छोटे-छोटे राज्य थे जो आपस में तालमेल रखते थे उन ३० राज्यों में एक राज्य था ज्यांतियापुर और उनकी एक मंत्री परिषद थी। उ वीरेन्द्र का ज्येष्ठ पुत्र उस समय में ज्यान्तिपुर राज्य का राजा था। जब ब्रिटिश शासन ने आक्रमण करके बिखराव कर दिया, इस कारण इस छोटे से राज्य की स्वतंत्रता खतरे में पड़ गई। अब इस राज्य के दो भाग कर दिये गये, एक समतल क्षेत्र का राज्य, दूसरा पर्वतीय क्षेत्र का राज्य। यहाँ का राजा पर्वतीय क्षेत्र की राजधानी जोनाई में रहता था।

उस समय मे ंप्रजा का सम्बध हिन्दू संतों से था। क्योंकि २५०० वर्ष पूर्व आदि शंकराचार्य का प्रवास ज्यांतिपुर राज्य में हुआ था।

१७वीं शताब्दी में ज्यांतिया समाज का भविष्य बहुत उज्ज्वल था। १८३५ में जब ब्रिटिश में ज्यांतियापुर पर आक्रमण किया ज्यांतिया वीरों ने युद्ध तो किया लेकिन ब्रिटिश कूटनीति के कारण यह ज्यांतिया राज्य अंग्रेजों का कब्जा हो गया। ऐसी अवस्था में ज्यांतिया मंत्री मण्डल की इच्छा थी राजा पर्वतीय क्षेत्र में चला जाये किन्तु राजा ने ब्रिटिश सरकार से सन्धि कर ली इस सन्धि को मंत्रीमण्डल व प्रजा के लोगों ने स्वीकार नहीं किया। इन पराजय के बाद उ कियांग को ज्यांतिया समाज का नेता चुना गया। उ कियांग शक्तिशाली बलिष्ठ था। उ कियांग नागवा राजा के नाम से परिचय हो गया। देखने में लम्बा चौड़ा पहाड़ों पर बहुत तेज दौड़ता था। चीते की तरह छलांग लगाता था फुर्तिला व चंचल था इसका रंग गेहुँआ था यह धोती और पगड़ी धारण करता था। उसने युवकों को आवाहन किया कि धोती व पगड़ी धारण करो। उसने युवकों को कहा कि मेरी पत्नी बच्चे नहीं, मैं अकेला और आप सबका नेता हूँ। संयम हमारे जीवन का अंग है। ब्रिटिशों के अत्याचारों से धरती माँ को हम मुक्त करेंगे। परकीयों कि दास्तां नहीं करना आओ हम सब संगठित हों और धरती माँ को मुक्त करने का संकल्प लें। शास्त्रों का अभ्यास करें।'' इतना कहना था कि ज्यांतिया पर्वतमालाओं में युवकों ने शस्त्रों का अभ्यास शुरु कर दिया। उ कियांग नागवा वंशीवादन भी करता था अपनी वंशी की ध्वनि से वह शस्त्र विद्या को उत्साह प्रदान करता था। एक बार दरबार लगा हुआ था और उ कियांग नागवा सिंहासन पर था। एक वृद्ध आया और उसने कहा उ कियांग शस्त्रों की विद्या का अभ्यास मैंने देखा है बहुत अच्छा है। फिर कहा कि उ कियांग तुमने जो धोती पगड़ी पहनी वह ठीक नहीं है। उसे ठीक करो। उ कियांग को क्रोध आ गया। उसने स्पष्ट शब्दों में कहा में कहा तुम लोगों ने जब हमको राज्य का मुखिया बनाया है तो मेरे कार्य में दखल क्यों देते हो। मेरी वंशी की ध्वनि वीरता का परिचायक है यदि मेरे कार्य में किसी ने अनुचित दखल दिया तो उसको मेरे कोप का भाजन बनना पड़ेगा। जब समतल पर ज्यांतियापुर में अंग्रेजों का अधिकार हो गया तो उन्होंने पर्वतमालाओं के ऊपर ब्रिटिश सत्ता का शासन करने के लिए जोनाई की तरफ बढ़ना शुरु कर दिया। जोनाई राज्य में अंग्रेज हारे तो उन्होंने कूटनीति से काम लेना शुरू कर दिया इन अंग्रेजों ने लोगों को लोभ लालच देकर इसाई बनाना शुरु कर दिया। इस पर उ कियांग नगमा ने अंग्रेजों के विरुद्ध में युद्ध की घोषणा कर दी। जब उ कियांग वंशी बजाता युवक युद्ध के लिए सज्जित होने लगे और उसने सबको संगठित करना शुरु कर दिया। और उसने एक प्रेरणा दी लेकिन ब्रिटिश शासन ने १८६० में ग्रह कर लगाने का ज्यांतियपुर में लोगों ने विरोध शुरु किया। गुप्त रूप से जोवाई, श्यामकुगंम, मिन्सो, नार्टीयांग, रायलिंग, बारो के स्थानों पर ज्यंतिया वीरों ने धनुष-बाण, तलवार-भालों से सज्जित होकर ब्रिटिश सत्ता का विरोध किया। ऐसे समय में उ कियांग नगमा अपने वंशी की ध्वनि से युद्ध के संकेत भी देता था जिसको ब्रिटिश भी नही समझ सके। वह जनता से वंशी की ध्वनि में कहता था ''हमारे वीरजवानों उठो, जाग्रत हो जाओ और ज्यांतिया समाज अपने भोलेपन को त्याग दो अपने धनुष बाण, तलवार को युद्ध करने के लिए उठा लो। धोती कसकर बांधों पगड़ी की लाज रखो। अब धोखेबाज ब्रिटिश ने हमें पुनः ललकारा है। आगे बढ़ो युद्ध करो, अंग्रेजों को अपनी धरती से बाहर कर दो। हमें उन अंग्रेजों के रक्त से अपनी माँ की प्यास बुझानी है। आओ ज्यांतियापुर की

वीरांगना आओ, तुमको भी इस बलिदान युद्ध में कार्य करना है।

वंशी की ध्वनि, ढोलकों की थाप आज प्रत्येक आवास में गूंजने लगी। महिला पुरुष तरुण-तरुणी उ कियांग के नेतृत्व में प्रतिज्ञाबद्ध हो चुके थे। अपने वीर नेता का एक एक शब्द का पालन अपने प्राणप्रिय नेता के लिए ज्यांतियावासियों के लिए अर्पित कर दिया। अब ब्रिटिश सत्ता के प्रति ललकार उठी थी। ऐसे भयंकर समय में ब्रिटिश सरकार में चुने ३०० लेवी कर अदा का सम्मन जारी किया। हम किसी प्रकार का ब्रिटिश सरकार को कर नहीं देंगे। उ कियांग ने घोषणा कर दी। उस समय जोवाई के सभ्य समाज को ब्रिटिश सरकार का अत्याचार भुगतना पड़ा। ज्यांतिया के लोगों को जेल में भर दिया गया ब्रिटिशों ने उ कियांग नागवा को हाथ नहीं लगाया। इतने पर भी उ कियांग के नेतृत्व पर किसी का विश्वास नहीं हटा। उ कियांग नागवा के आदेश पर क्रांतिकारी सैनिक मिन्सी, सांगपुर, निर्टीयांग, नामलिंग स्थानों से हजारों की संख्या में निकल पड़े और जोनाई स्थान पर अंग्रेजों के खिलाफ आक्रमण कर दिया। उ कियांग नगमा के सैनिकों ने केवल जोवाई ही नहीं ७ स्थानों पर योजनाबद्ध आक्रमण किया और विजय प्राप्त की।

अंग्रेज उनकी गुरिल्ला युद्ध विद्या को देखकर अचम्भित हो गये और उसका लोहा मानने लगे। अब ब्रिटिश सरकार उ कियांग नागवा से बहुत भयभीत हो गयी थी। उ कियांग नागवा के ज्यांतियापुर सैनिकों ने २० माह तक युद्ध लड़ा। अंग्रेज हारते रहे। हजारों अंग्रेजों के शवों को कुचलते हुए ज्यांतियावीर उ कियांग आगे बढ़े। अब ब्रिटिश शासन ने योजना बनाई की हमको उ कियांग को किसी न किसी प्रकार गिरफ्तार करना होगा। उ कियांग नागवा का प्रमुख साथी अंग्रेजी सत्ता के प्रभाव में आकर मिल गया यह दुर्भाग्य ही था। वीर उ कियांग अंग्रेजों के हाथ आ गया और सन्धि करने की योजना बनाई। वो लगभग २ वर्ष तक युद्ध करते करते थक गया था। उस वीर उ कियांग युद्ध में घायल वीर सैनिक उठाकर मुंशी गाँव में उसको सुरक्षित रखा और इसी प्रमुख गुप्तचर उ दोलोई तेरकर ने गुप्त सूचना ब्रिटिश साईमन को भेजी कि ज्यांतिया वीर भूमि अपने कुपुत्रों के कार्य से पुनः दासता को स्वीकार कर लिया। अब साईमन के ब्रिटिश सैनिकों ने आनन-फानन में मुंशी ग्राम को चारों ओर से घेर लिया फिर भी अपने नेता की अनुपस्थिति में ज्यांतिया वीर सैनिकों ने युद्ध किया। किन्तु क्रांतिकारी सैनिक ब्रिटिशों के आगे टिक नहीं सके। बीमार अवस्था में उ कियांग को गिरफ्तार कर लिया। जनता और सैनिकों ने आत्मसपर्मण नहीं किया और बलिदान देना श्रेष्ठ समझा। साईमन ने उ कियांग ने सन्धि पत्र को फाड़ कर फेंक दिया। अब उसके ऊपर अमानवीय अत्याचार होने लगे। लेकिन उ कियांग को ब्रिटिश सरकार किसी भी प्रकार विवश नहीं कर सकी। अंत में उसको फाँसी की सजा सुनाई। यहीं कारवीयाआंगलांग जिले के पास आज का जोनाई स्थान पर सार्वजनिक रूप में ३० दिसम्बर, १८६२ के दिन उसको फाँसी पर लटका दिया गया। एक बलिदानी स्वतंत्रता के सेनानी के जीवन का अन्त हो गया। स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद मेघालय राज्य होने पर भी ज्यांतिया समाज के कार्य का दूर तक कोई चिह्न जोवाई स्थान पर नहीं मिलेगा। ३० दिसम्बर की प्रभात बेला में फांसी लगने के पूर्व ज्यांतिया समाज को संदेश देकर गये। हमारे वीर भाईयों-बहिनों मेरे मुस्कुराते मुख को देखो उत्साह से देखो रोओ मत। भारत माता ने तुम्हारी गोद में अनेकों उ कियांग दिये हैं उन्हें वीर कियांग बनाओ। देश के लिए समर्पित कर दो किन्तु देश के लिए यही मेरा कार्य तुम्हारे लिये प्रेरणा बनेगा।''

।। बंगाल का बाल बलिदानी ।।

खुदीराम बसु

• पद्मा चौगांवकर

जिस माँ ने जन्म दिया उस ममतामयी माँ का तो हर कोई ऋणी है ही, पर जिस भू पर जन्म हुआ, जिस देश की माटी ने हमारा पालन पोषण किया उस माँ मातृभूमि के कर्ज से मनुष्य मृत्यु के बाद भी ऋण मुक्त नहीं हो सकता।

ये विचार थे उन क्रांतिवीरों के, देश प्रेम की भावना जिनकी रग-रग में, खून बनकर बहती थी।

जिन्होंने खाते-पीते, उठते-बैठते, सोते-जागते, हर पल हर जगह मातृभूमि के प्रेम की ज्योति को, हृदय में जलाए रखा। और उसके लिए आत्मोत्सर्ग तक कर गये।

स्वदेश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त करने के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले शहीदों में, पहला नाम खुदीराम बसु का है।

बंगाल के इस बहादुर बालक को सिर्फ अठारह वर्ष की उम्र में फाँसी की सजा सुनाई गई, उसने भी उस फंदे को हँसते-हँसते गले लगाकर मातृभूमि के लिए बलिदान दिया।

खुदीराम का जन्म ३ दिसम्बर १८८९ को पश्चिमी बंगला के मिदनापुर जिले के बहुबेनी गाँव में हुआ था। उनके पालक, त्रैलोक्य नाथ और माता का नाम लक्ष्मीप्रिया देवी था।

तामकुल हेलमिंटन हाई स्कूल में वे सिर्फ नवीं कक्षा तक पढ़े। स्कूली दिनों में, किशोर अवस्था में प्रवेश किया ही था कि देश की राजनैतिक गतिविधियों में शामिल होने लगे- अंग्रेजों के अन्याय, अनैतिकता और अत्याचारों के विरोध में स्वतंत्रता आन्दोलन में कूद पड़े। वन्दे मातरम के पर्चे बांटकर लोगों में क्रांति जगाई।

नवीं कक्षा में ही उनका ध्यान पढाई से उचट गया अब तो जीवन का एक ही उद्देश्य था, देश के लिए कुछ करना। पढ़ाई छोड़ दी।

और फिर मुक्ति आन्दोलन के लिए, रिवोल्यूशनरी पार्टी के सक्रीय सदस्य बन गये। अंग्रेजों की नाम में दम कर दिया।

सन् १९०५ में अंग्रेजों द्वारा, जब बंगाल विभाजन का विचार किया गया। तब बंगभंग के विरोध में क्रांतिकारियों ने आवाज उठाई तब खुदीराम ने इसमें बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। वन्दे मातरम् पुकारकर जन–जन को जाग्रत किया।

अंग्रेजों के अत्याचारों से त्रस्त जनता के दिलों में वे अब तक बस चुके थे और इसलिए अंग्रेजों की कड़ी नजर उनकी गतिविधियों पर रहती। यह बालक उन्हें एक बवंडर सा दिखाई देता, चतुर, चुस्त और उमंग भरा।

६ दिसम्बर १९०७ में बंगाल के रेल्वे स्टेशन पर किये गये बम विस्फोट में खुदीराम का नाम आया, पर वे पकड़े नहीं जा सके।

उन दिनों कलकत्ता (आज का कोलकाता) में किंग्स फोर्ड नामक अंग्रेज चीफ प्रेसिडेन्सी मजिस्ट्रेट था। वह बहुत सख्त और क्रूर था। क्रांतिकारियों का तो जैसे काल था। उन्हें दबाने और सबक सिखाने के लिए, बुरे से बुरे तरीकों से प्रताड़ित किया जाने के पक्ष में था...और सदा ऐसे अवसरों की ताक में रहता।

इसीलिए वह भी क्रांतिकारियों के निशाने पर था। और उनके आक्रोश का भाजन उसे बनना ही था।

युगांतर क्रांतिदल इस दुश्मन को खत्म कर देना चाहता था। इसलिए मुजफ्फरपुर (बिहार) में किंग्सफोर्ड की हत्या की योजना बनाई गयी।

इस काम के लिए दल के दो तेजतर्रार युवा सदस्यों को चुना गया, वे थे खुदीराम बोस और प्रफुल्लचंद चाकी।

योजनाबद्ध रणनीति के तहत वे दोनों मुजफ्फरपुर पहुँचे। कई दिनों तक वे एक यात्री निवास में रुके रहे और चुपचाप किंग्स फोर्ड की दिनचर्या पर नजर रखते रहें।

दोनों ने जानकारी जुटाई कि वह रोज शाम को अपने बंगले के पास ही, एक क्लब में जाया करता है, उस क्लब में कई अंग्रेज ऑफिसर भी मनोरंजन के लिए जाते थे।

खुदीराम और प्रफुल्लचंद ने तय किया कि, जब किंग्स फोर्ड, रात क्लब से वापस लौटें, उसकी हत्या कर दी जाय।

३० अप्रैल १९०८, मजिस्ट्रेट किंग्स फोर्ड, अपनी बग्घी में बैठकर, पत्नी के साथ क्लब पहुँचा।

उधर दोनों युवा क्रांतिकारी, झाड़ियों और वृक्षों की ओट लेकर अवसर की ताक में बैठे थे... समय जैसे रुक गया था। इंतजार तो करना ही था खतरों से खेलना उन्हें खूब आता था।

रात के आठ बजने को थे कि क्लब के एक बग्घी बाहर निकली रात का अंधेरा था, दृष्य धुंधला सा क्रांतिकारियों ने समझा बग्घी किंग्स फोर्ड की है और बिना गवांए तत्परता से उन्होंने बग्घी पर बम फेंक दिया। और वहाँ से भाग निकले।

उनका निशाना तो सही बैठा था बग्घी पर लेकिन वह बग्घी किंग्स फोर्ड की नहीं थी। एक दूसरे अंग्रेज ऑफिसर केनेडी की थी। और उसमें सवार थी, केनेडी

की पत्नी और बेटी। उस विस्फोट में उन दोनों की मौत हो गई।

अफरा-तफरी मच गई। अंग्रेजी पुलिस अपराधी की तलाश में जुट गई।

दूसरे दिन दोनों क्रांतिकारी एक गुमटी (छोटी सी दुकान) पर खड़े थे। वहाँ खड़े कुछ लोग आपस में बात कर रहे थे। अंग्रेज अफसर केनेडी की बग्घी पर किसी ने बम फेंका, विस्फोट में उनकी पत्नी और बेटी की मृत्यु हो गई।

यह सुनकर खुदीराम और प्रफुल्लचन्द को धक्का लगा, और मुंह से निकल गया- '' तो वह किंग्स फोर्ड नहीं था?'' ...पर अपनी गलती समझते ही वे दोनों वहां से भाग गये। किसी मुखबिर ने यह सूचना और उन दोनों का हुलिया अंग्रेज पुलिस को दे दिया।

पुलिस को पहले ही शक था खुदीराम पर। उन्होंने जगह-जगह छापे और घेराबंदी की।

सब तरफ से घिर जाने पर प्रफुल्लचंद ने अपनी ही बंदूक की गोली से जीवन का अंत कर लिया। उनके अंतिम शब्द थे 'वन्दे मातरम्!'

खुदीराम को पकड़ लिया गया। मुकदमा चला और सजा सुनाई गई फाँसी की।

११ अगस्त १९०८ को उस सबसे कम उम्र दिलेर क्रांतिकारी को फांसी दे दी गई।

इतिहासवेत्ता मालती मलिक के अनुसार- उसमें विलक्षण ललक थी, देश की आजादी के लिये। वह उग्र युवा देशभक्त क्रांतिकारी खुदीराम बोस, हाथ में भगवत् गीता लिये बलिदान हो गया।

मीडिया रिपोर्ट के अनुसार - मुजफ्फरपुर जेल में जिस जज ने उसे फांसी पर लटकाने का आदेश सुनाया था, उसने बताया कि ''खुदीराम एक शेर के बच्चे की तरह निर्भीक था। हँसते-हँसते फांसी पर चढ़ गया।''

खुदीराम की फाँसी से बंगाल के लोग बहुत व्यथित हुए। उसके अंतिम संस्कार में सम्मिलित हुए लाखों लोग सबकी आँखें नम थी उस देशभक्त के लिए।

बंगाल के उस प्यारे शहीद की चिता की भस्म जैसे एक पवित्र हवन की राख थी, उसकी पवित्र चिता भस्म लोगों ने डिबिया में अपनी पूजा घर में रखी।

खुदी की शहादत को दिलों में जिन्दा रखने के लिए, बंगाल के जुलाहों ने विशेष प्रकार की धोतियाँ बुनी, जिसकी किनारी पर खुदीराम का नाम था।

इस ''खुदीराम धोती'' ने दशको तक क्रांति की अलख को जगाए रखा।

भारत माँ के इन सपूतों को सौ-सौ बार नमन। जिन्होंने हमारे दिलों में देश प्रेम की अखण्ड ज्योति जलाई है।

• गंजबसौदा (म.प्र.)

बलिदान जहाँ श्रद्धा का पुरस्कार पाते,
तो वहाँ सदा बलिदानी पैदा होते हैं।

बलिगाथाएँ जिन्दा रखती हैं देशों को
बलिदान, देश की कलुष-कलिमा धोते हैं।

यदि है अभीष्ट, आजादी फूले और फले
बलिदान किये हैं जिनने उनको याद करो।

जो किसी राष्ट्र को जिन्दा रखते खुद मर मरकर
उन वीरों का, उन सिंहों का जयनाद करो।

- महाकवि श्रीकृष्ण 'सरल'

।। मालवा का मृत्युंजयी ।।

चन्द्रशेखर आजाद

• रखबचंद बावेला

अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद के पिता पं. सीताराम तिवारी उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के बदरका ग्राम से तत्कालीन देशी राज्य अलीराजपुर के एक ग्राम भावरा में आ बसे थे और वहीं बासों के टट्टरों की एक झोपड़ी में हद दरजे की गरीबी में माता जगरानी देवी के गर्भ से उनका जन्म २३ जुलाई, १९०६ में हुआ था।

बालक चन्दशेखर बचपन से ही महान साहसी थे और १९२०–२१ के जमाने में घर से भागकर, कुछ दिनों बम्बई में मजदूर जिन्दगी बिताकर बनारस पहुँचे थे और वहाँ अन्नक्षेत्र में भोजन पाकर संस्कृत पाठशाला के छात्र हो गए थे। असहयोग आन्दोलन में उन्होंने बड़े उत्साह से कार्य किया और अपनी असाधारण कार्यक्षमता से वह वहाँ के सभी बड़े कांग्रेसी नेताओं के बहुत प्रिय हो गये थे।

जब असहयोग आन्दोलन में चन्द्रशेखर को १५ बेतों की सजा हुई और उन्हें जेल में ले जाकर टिकटी से बाँधकर बेत लगाये गये, तो प्रत्येक बेत के प्रहार पर वह महात्मा गाँधी की जय नारा लगाते थे बनारस के कांग्रेसियों में वह आजाद के नाम से विख्यात हो गये क्योंकि अदालत में नाम पूछे जाने पर उन्होंने अपना नाम आजाद ही बताया था। एक सार्वजनिक सभा में उनका विशेष सम्मान किया गया था।

असहयोग आन्दोलन समाप्त हो जाने के बाद जब बनारस में क्रांतिकारी दल पुनः संगठित और सक्रिय हुआ तो श्री मन्मथनाथ गुप्त के सम्पर्क से आजाद क्रांतिकारी दल में सम्मिलित हो गये और दल के धन–संग्रह के अनेक साहसी कार्यों में उन्होंने बढ़ चढकर भाग लिया। काकोरी ट्रेन डकैती में भी वह सम्मिलित थे। दल में अपनी बाल सुलभ चपलता के कारण वह क्विकसिल्वर (पारा) कहलाते थे। उनके इस नाम का उल्लेख केस में दर्ज बयानों में भी हुआ।

अन्य लोगों की धारणा थी कि यह ''क्विकसिल्वर'' पुलिस की नजरों से बचा न रह सकेगा। परन्तु हुआ यह कि काकोरी केस मे फरार घोषित लोगों में अन्ततः चन्द्रशेखर आजाद ही कभी पुलिस के हाथों में नहीं पड़े और लगभग ६ वर्ष तक संगठित क्रांतिकारी दल ''हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना'' के प्रधान सेनानी के रूप में दल के बौद्धिक नेता अमर शहीद सरदार भगतसिंह के साथ उसका नेतृत्व करते हुए। २७ फरवरी, १९३१ को

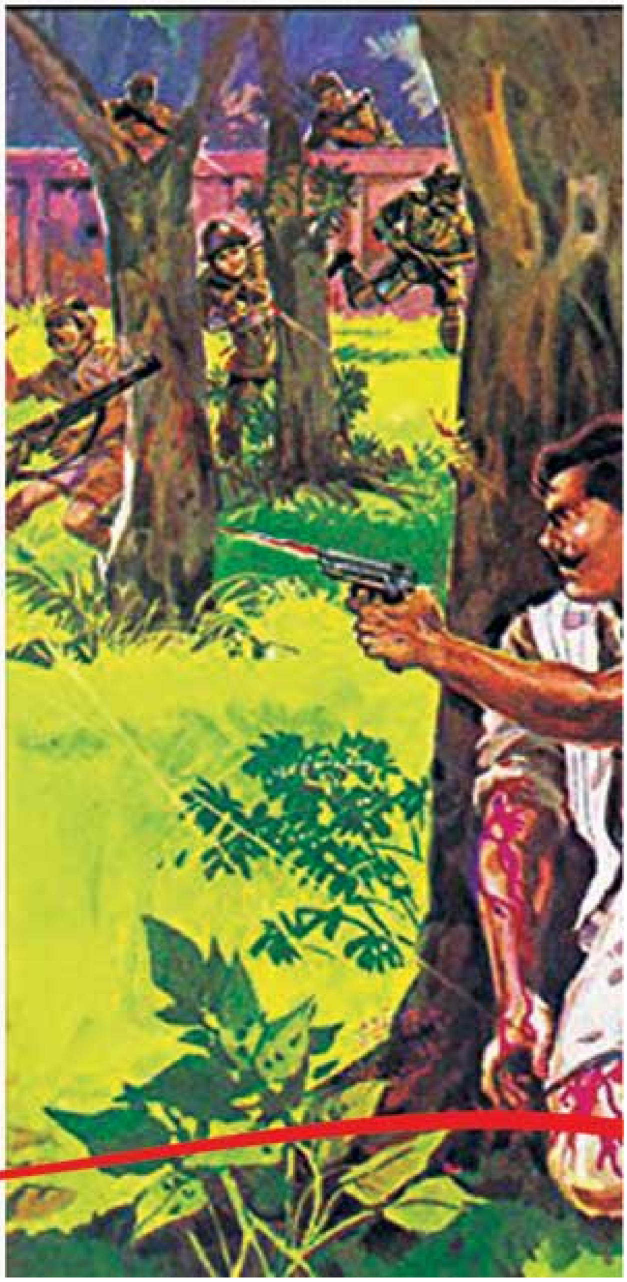

प्रयागराज (इलाहाबाद) के एल्फ्रेड पार्क में पुलिस की शस्त्रात्रों से सुसज्जित टुकड़ी से अपने एक छोटे से पिस्तौल से सम्मुख युद्ध करते हुए ही उन्होंने वीरगति पायी थी।

दल के सैनिक नेता के रूप में वह प्रत्येक सैनिक कार्य मे आगे रहते थे। लाहौर में जब लाला लाजपतराय पर, साइमन कमीशन के विरोध में निकाले गये जुलूस का नेतृत्व करते हुए लाठियाँ बरसायी गयी और उसके कुछ दिनों बाद उनकी मृत्यु हो गई, तो इस प्रकार राष्ट्र का जो घोर अपमान हुआ उसका प्रतिशोध क्रांतिकारी दल ने लेने का निश्चय किया। आजाद के नेतृत्व में भगतसिंह और राजगुरू ने दिनदहाड़े असिस्टेण्ड पुलिस सुपरिटेंडेट साण्डर्स को माल रोड़ पर उसके दफ्तर के सामने ही गोली से मार गिराया।

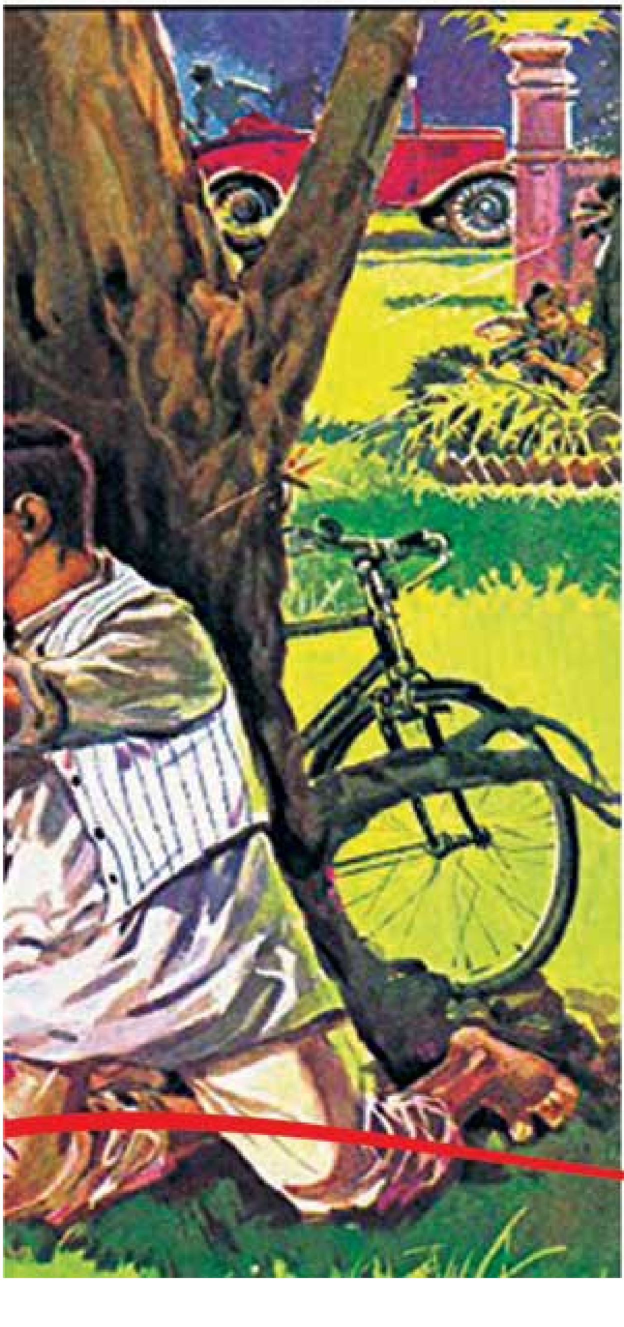

दल में आपस में चलने वाले विनोद ने भी जब कभी भगतसिंह उनसे कहते कि –''पंडित जी, दल के नेता के रूप में पकड़े जाने पर आपको तो निश्चित रूप में फाँसी की सजा होगी और तब आपके लिए दो रस्सों की जरूरत पड़ेगी, एक आपके गले के लिए और दूसरा आपके इस कुछ भारी भरकम पेट के लिए'' तो उन्हें झिड़ककर आजाद कहा करते थे।

''देख पुलिस मुझे रस्सी से बाँधकर बंदरिया जैसा नाच नचाती फिरे और फिर मुझे फाँसी पर टांग दे, यह मुझे कभी अच्छा नहीं लगता। वह तुझे मुबारक हो। जब तक यह बमतुल बुखारा (आजाद ने अपने पिस्तौल का यही विचित्र नाम रखा था) मेरे हाथ में है, कोई माई का लाल मुझे जीवित नहीं पकड़ सकता।''

अपने इस इरादे को उन्होंने पद्य में भी यों प्रकट किया था–

दुश्मन की गोलियों का हम सामना करेगें।
आजाद ही रहे है आजाद ही रहेगें।

उनकी यह भविष्यवाणी सर्वथा सत्य हुई।

आजाद भीषण गरीबी, अशिक्षा और कुसंस्कारों में जन्में और पले थे, और फिर वह पुस्तकें पढ़कर नहीं, क्रांतिकारी जीवन में अनुभव से सीखते हुए और आगे प्रगति करके, हिन्दुस्तानी समाजवादी प्रजातंत्र सेना के प्रधान सेनानी हुए और पुलिस से सम्मुख युद्ध में शहीद हुए। इस प्रकार उनका जीवन भारतीय आम जनता के क्रांति पथ पर बढ़ते जाने का प्रतीक हो गया और हमें विश्वास दिलाता है कि जिस जनता में चन्द्रशेखर आजाद जैसे कुशल क्रांतिकारी नेता और सेनानी जन्म लेते हैं, वह जनता निश्चित रूप से अपने क्रांति पथ पर निरंतर आगे–आगे बढ़कर भारत में आर्थिक शोषण विहीन प्रजातंत्र स्थापित करके ही रहेगी।

निश्चित रूप से काकोरी काण्ड से संबंधित क्रांतिकारी दल की देश के स्वतंत्रता संग्राम को व्यक्ति के रूप में सबसे अधिक महत्वपूर्ण देन अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद ही हैं।

• इन्दौर (म.प्र.)

।। बिहार के वीर विद्यार्थी ।।

सात सपूत

• गोपाल माहेश्वरी

सन् १९४२ आते आते आजादी की दूसरी लड़ाई भी अपने पूरे उफान पर थी। अगस्त का महीना था लेकिन वर्षा समूचे देश में अंग्रेजों के विरुद्ध भारतीय स्वतंत्रता की आग को धधका रही थी। मुम्बई के सागर तट से गाँधी बाबा की हुंकार उठी– करो या मरो इस हुंकार से जो तूफान उठा वह सारे देश में अंग्रेजी सरकार के परखच्चे उड़ाने लगा। बिहार की राजधानी प्राचीन पाटलीपुत्र ने इतिहास की कई क्रांतियाँ कई उतार चढ़ाव देखे थे। वह महामति चाणक्य की हुंकार सुन चुकी थी। लेकिन जन सागर में जैसे ज्वार इस क्रांति ने उठाया था वह अद्‌भुत रोमांचक था।

९ अगस्त १९४२। पटना की सार्वजनिक सभा में सचिवालय पर तिरंगा फहराने का कार्यक्रम निश्चित हुआ। ११ अगस्त का वह दिन इतिहास में सदैव अविस्मरणीय बन गया सूर्य भी मानों अपना रथ रोके अथकित नयनों से एक टक देखता ही रह गया जब पटना के विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं नगरवासियों के जत्थे के जत्थे हजारों की संख्या में आजादी के नारे और तराने बुलन्द करते जुटते गए। पीर बहोर से जुलूस विभिन्न मार्गों से होता हुआ सचिवालय की ओर बढ़ चला तब वह बीस हजार स्वातंत्र्य पुजारी दीवानों की जनमेदिनी बन चुका था।

सचिवालय को संगीन और बन्दूकधारी अंग्रेज भक्त सैनिकों ने घेर रखा था। घुड़सवार जत्थे किसी भी पल देशभक्तों की निहत्थी सेना पर लाठियाँ गोलियाँ चलाने को तैयार खड़ी थी। और जैसे ही यह देश के दीवाने सामने पड़े घोड़ों की टापों से रौंदे जाने लगे। इसी आपाधापी में एक क्रांतिदूत नौजवान सचिवालय के पश्चिमी द्वार से प्रवेश कर गया मानो हनुमान ने लंका में प्रवेश किया हो। वह ध्वज स्तंभ तक पहुँचा और आश्चर्यजनक स्फूर्ति से उस पर चढ़कर यूनियन जैक उतारा और तिरंगा फहरा दिया।

तिरंगा फहरते देखकर जन समुद्र का तूफान सौ गुना उत्साह से बढ़ चला। दनादन गोलियाँ की बरसातें होने लग, अंग्रेजी सैनिकों की तीखी संगीनें भारतीय

सेनानियों के हृदयों में धंसती चली गई। निर्मम घुड़सवार जीवित लोगों की देह लाशों से भी बदतर समझ कर रोंदते चले गए।

'फायर' अंग्रेजी कलेक्टर आर्चर का आग्नेय आदेश गूंजा और राउण्ड पर राउण्ड फायर करती बन्दूकों की गोलियों ने बरसात की बून्दों सा रूप ले लिया। निहत्थे स्वातंत्र्य सेनानियों की देह से खून के सैकड़ों फव्वारे छूट पड़े। सचिवालय का द्वार रक्त से सन गया मानो तिरंगे का ध्वज मण्डल वीरों के पवित्र रक्त से अभिसिंचित किया गया हो। एक के बाद एक शहीद गिरते गए पर तिरंगा एक से दूसरे के मजबूत हाथों में लहराता रहा। देह गिरती गई पर झण्डा न झुका। चौदह राउण्ड गोलियाँ चली कई स्वर्ग सिधारे कई अस्पताल पहुँचाए गए पर तिरंगा लहराता रहा उसे थामते हुए एक के बाद एक छः विद्यार्थी वीर मातृभूमि पर प्राणों के फूल चढ़ा चुके थे अब झण्डा पटना के राजा राजमोहन राय सेमिनरी स्कूल के एक छात्र के हाथ था। उसे अस्पताल पहुँचाया गया चिकित्सक से उसका प्रश्न था– ''डाक्टर! गोली मेरी पीठ में तो नहीं लगी?''

''नहीं!'' डाक्टर चकित था। गोली खा कर भी छात्र मुस्करा रहा था यह उत्तर सुनकर एक अपूर्व संतोष से उसने जोर से नारा बुलन्द किया ''भारत माता की जय''। खून काफी बह चुका था नारे के साथ ही रक्त का और तेजी से बह चला लेकिन यह तो वह रक्त था जिसका कण कण था ही भारत माता के लिए। वह अचेत हुआ और फिर उठा ही नहीं सो गया। प्यारी भारत माता की गोद में हमेशा के लिए।

१५ अगस्त, १९४७ को उगे स्वतंत्र भारत के पहले सूरज में इन सातों शहीदों के रक्त की लाली भी चमक रही थी।

कृतज्ञ राष्ट्र ने उनका स्मारक बनवाया जिसमें इन सातों बलिदानियों की तिरंगा सम्हाले मूर्तियाँ आज भी हमें स्वतंत्रता का मोल समझाती है। पटना आज भी गौरवान्वित अपने इन सपूतो के बलिदान पर। पटना सचिवालय के पूर्वी द्वार के चौराहे पर २० फुट ऊँचे इस चबूतरे पर खड़ी इन सात मूर्तियों को ध्यान से देखो ये कहती प्रतीत होती है।

हम लाए हैं तूफान से कश्ती निकाल के।
इस देश को रखना मेरे बच्चों सम्हाल के।।

• इन्दौर (म.प्र.)

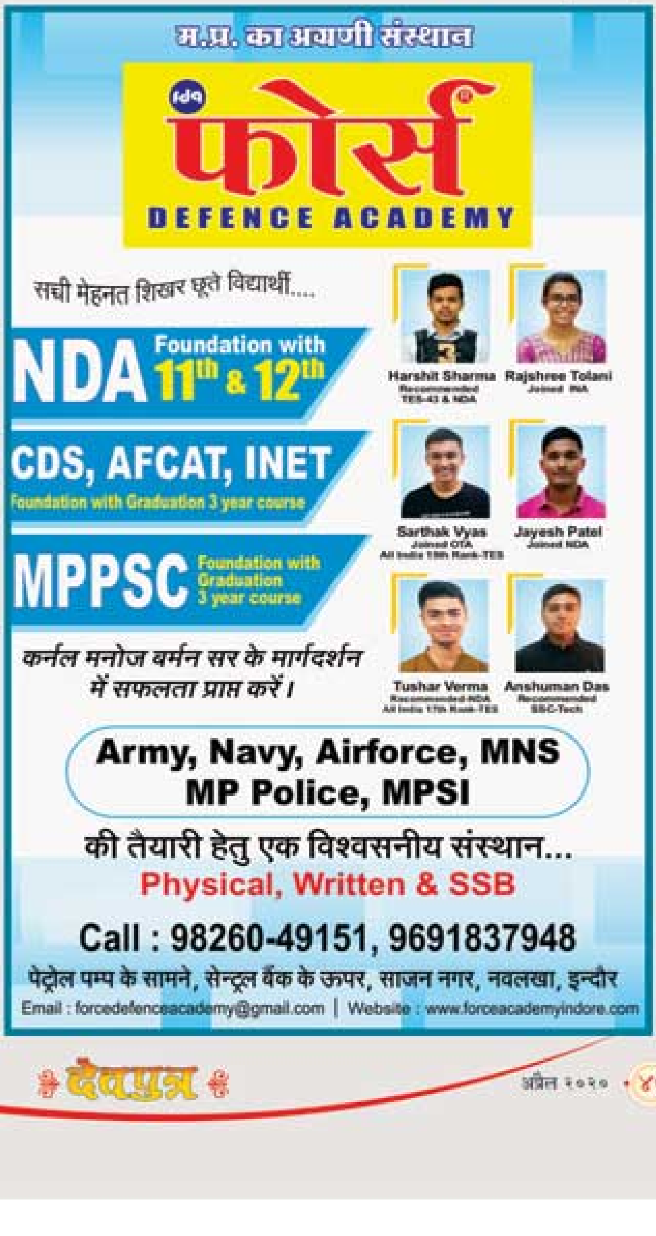

।। हल्दीघाटी के योद्धा ।।

प्रताप से एकालाप

● श्यामनारायण पाण्डेय

महारथी! सावन का महीना था, आसमान पर घटा लगी हुई थी, आसमान आँखें मूँदकर सो रहा था, दोनों सेनाएँ युद्ध के लिए खड़ी थीं, मेघाच्छन्न आकाश में कभी-कभी बिजली चमक जाती थी, इधर तलवार। तू चेतक पर चढ़कर सेना का संचालन कर रहा था, उधर हाथी पर चढ़ कर मानसिंह। बादल ने कड़ककर कहा- 'युद्ध आरम्भ करो।' देर न थी। 'हर हर महादेव' के निनाद से नीरव वातावरण कोलाहलमय हो गया। तेरे वीर सैनिक दूने उत्साह से मुगल सेना पर टूट पड़े। मरने-कटने की बान पुश्तैनी थी। प्राणों की रंचक परवाह न कर, रणमत्त वीर मुगलों को गाजर मूली की तरह काटने लगे। क्षण भर पहले जो पृथ्वी घिरे हुए बादलों से पानी की आशा रखती थी, उस पर उससे भी अधिक मूल्यवान शोणित तीव्र गति से बहने लगा। लहू देख-देखकर राजपूतों की हिंसा वृत्ति और भी अधिक जागरित होती जाती थी। वे एक एक कदम आगे ही बढ़ते थे। मुगल दल विस्मित और चिन्तित हो उठा।

समर केसरी! तू चपलगति चेतक पर सवार होकर आगे-पीछे इधर-उधर सब ओर विद्यमान था। तू अपने अभ्यस्त हाथों की तीक्ष्ण तलवार से लोथों पर लोथें लगा रहा था, दुधारी की चोट खा खाकर वैरी धराशायी हो रहे थे। तू एक क्षण में सहस्त्रों के शिर धड़ से अलग कर देता था, तेरी भीषण मूर्ति और अदम्य उत्साह देखकर तेरे वीर सैनिकों ने प्राणों का मोह छोड़ दिया था। बड़ा भीषण युद्ध था।

विश्ववीर! भाले बरछों से फिर मुठभेड़ हुई, घमासान युद्ध आरम्भ हो गया, हाथियों ने हाथियों पर, घोड़े ने घोड़ों पर और सवारों ने सवारों पर बड़ी तीव्रता से आक्रमण किया। दोनों दलों के वीर सैनिक एक दूसरे के खून की प्यास से व्याकुल हो रहे थे, रुण्ड-मुण्ड से मेदिनी पटने लगी, कहीं घोड़े भाग रहे थे, कहीं हाथी चिंग्घाड़ रहे थे, कहीं लाशों पर लाशें बिखर रही थी, कभी लहू की बाढ़ से मुरदे बह जाते थे, तो कभी शोणित के वेग से पृथ्वी कट जाती थी। बड़ी भीषण मारकाट थी। हार जीत का पता नहीं था। विजय हिंडोले पर थी, कभी इधर कभी उधर। कभी लोम-हर्षण संग्राम था प्रताप।

महाकाल! दोनों दलों में हाहाकार मचा हुआ था, खून पर खून हो, किन्तु तेरी समरान्ध आँखें किसी और को खोज रही थीं। हाथ का प्रलयंकर भाला किसी विशेष वैरी को ढूँढ रहा था और तेरा तेजस्वी चेतक किसी अन्य शत्रु के अन्वेषण में लगा हुआ था। यह था देशद्रोही मानसिंह जिसकी तलवार अपनी ही जाति के रक्त की प्यास से व्याकुल हो रही थी, जिसको मेवाड़ की स्वतंत्रता खटक रही थी, जिसको अपनी जाति का गौरव अखर रहा था और जिसका हृदय हिन्दुत्व को मिटाकर ही संतुष्ट होना चाहता था।

प्रतापी प्रताप! अचानक तेरी

दृष्टि उस रणमत्त हाथी पर पड़ी जिस पर बैठकर वीर सैनिकों से घिरा हुआ मानसिंह अपनी सेना का संचालन कर रहा था। तेरे शरीर का रक्त उबल उठा और क्रोध की ज्वाला से देह जल उठी। चेतक उड़ा, शत्रु सेना को रौंदता हुआ हाथी के समीप जा धमका, क्षणभर लड़ा, फिर अपने अगले पैर हाथी के कुम्भ स्थल पर जमा दिए। भाला गेंहुवन की तरह मानसिंह की ओर लपका, फीलवान हाथी से गिर पड़ा और उस मुरदे को सिपाहियों ने कुचलकर चूर कर दिया। बिना महावत के हाथी चिंघाड़कर

भाग गया। मेवाड़ के दुर्भाग्य से मानसिंह की रक्षा हुई। बड़ा भयंकर समर था।

राणा प्रताप! मानसिंह तो बच गया लेकिन तेरे ऊपर असंख्य मुगल टूट पड़े। सर्पों के गरुड़ की तरह तू अपनी दुधारी से शत्रुओं को काटने लगा किन्तु वे रक्तबीज के समान घटते नहीं बढ़ते ही थे। तू शत्रु सेना से निकलकर अपनी सेना में आ जाना चाहता था, लेकिन उस कठिनव्यूह से निकल जाना सरल नहीं था। दिनभर काटते काटते तेरी तलवार थक गई थी, चेतक शिथिल हो गया था तेरी देह घावों से छलनी हो गई थी। उससे निर्झर की तरह रक्त बह रहा था तो भी तू बड़े उत्साह से मुगलों को यमपुरी का मार्ग दिखा रहा था। मेवाड़ का झगड़ा शोणित से रक्त हो गया था और महामृत्यु तुझे अपनी गोद में बिठाने का प्रयास कर रही थी। उसी समय मेवाड़ के सौभाग्य से शत्रुओं के शिर पर अपना घोड़ा दौड़ता हुआ झालामान्ना वहाँ पहुँच गया। उसने तेरे सिर के छत्र और हाथ से झण्डा छीन लिया। शत्रुओं ने उसे ही महाराणा समझा और चारों ओर से घेर लिया। तू बचकर निकल गया। झालामान्ना की तलवार बिजली की तरह तड़प–तड़पकर शत्रुओं पर गिरने लगी, मुगलों की लाशों का पहाड़ लग गया, लेकिन असंख्य तलवारों के प्रकाश में एक तलवार की ज्योति ही कितनी! झालामान्ना के शिर से मेवाड़ का छत्र गिरा और वहीं लाशों के बीच कहीं छिप गया। मेवाड़ का झण्डा गिरा और रक्त से लथपथ हो गया। अर्धमृत झालामान्ना ने एक बार किसी तरह उसे उठाया, लेकिन क्षणभर के बार फिर गिरा और वहीं झालामान्ना के मृत शरीर से कफन की तरह लिपटकर सो गया।

प्रतापसिंह! मेवाड़ प्राण झालामान्ना स्वदेश महायज्ञ में अपने प्राणों की आहुति देकर मुक्त हो गया। उसी अमर कीर्ति से यह निखिल सृष्टि सुरभित हो गई। मुगल दल विजय गर्व से उन्मत्त हो उठा। लेकिन विजय किसकी हुई, उसको तो उस दिन की घिरी हुई घटा ही बता सकती, जिसने बिजली की आँखों से बार–बार देखा था।

अमर प्रताप! तेरी हल्दीघाटी के बलिदानों ने संसार के सामने एक ऐसा आदर्श रख दिया जिसको कल्पना से ही देह पुलकित हो जाती है और आँखें सजल। थर्मापोली के समर में इतनी शक्ति कहाँ, जो तेरे महासमर की समता करें।

(प्रसिद्ध वीरकाव्य हल्दीघाटी की भूमिका से साभार संकलित अंश)

।। केरल का क्रांति कुसुम ।।

राजेन्द्र नीलकंठ

• रविचन्द्र गुप्ता

अंग्रेजी शासन काल में त्रावनकोर (केरल) में एक राजा का शासन था।

भारत की स्वतंत्रता की जब बात होती तो वहाँ के लोगों के मन में भी आता कि उन्हें भी आजादी मिले। वह भी भारत के अन्य क्षेत्रों की भांति अपनी चुनी हुई सरकार बनाएँ।

त्रिवेन्द्रम की एक पाठशाला में अध्यापक छात्रों को पढ़ा रहे थे। वह समय–समय पर भारतीय आजादी आन्दोलनों के बारे में छात्रों को बताते रहते थे। सुभाष, भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद आदि क्रांतिवीरों की कहानियाँ सुनकर छात्र बहुत आनन्दित होते थे अध्यापक बता रहे थे।

''महात्मा गाँधी के नेतृत्व में आजादी की लड़ाई अब भी चल रही है। अंग्रेज सरकार को आखिर झुकना ही पड़ेगा और भारत शीघ्र ही स्वतंत्र होकर रहेगा।''

छठी कक्षा का छात्र राजेन्द्र नीलकंठ बोला– ''महात्मा गांधी की तरह हम भी आन्दोलन चलाएँगे।''

''शाबास बेटा! महात्मा गाँधी के अनुयायी यहाँ भी है।'' अध्यापक ने उसे शाबासी दी।

इस छात्र का नाम था– राजेन्द्र नीलकंठ। इसके पिता श्री नीलकंठ पिल्लै भी महात्मा गाँधी के शिष्य थे। राजेन्द्र यद्यपि अभी मात्र ग्यारह वर्ष का ही था लेकिन इतनी छोटी आयु में उसके अन्दर देशभक्ति का ज्वार हिलोरें ले रहा था। इसी बीच भारत की आजादी की घोषणा हो गई। त्रावनकोर में भी तानाशाही शासन से मुक्ति हेतु आन्दोलन छिड़ गया।

१३ जुलाई, १९४७ ई.। त्रिवेन्द्रम में पीठ में विशाल जनसभा का आयोजन था। वहाँ की जनता भी त्रावनकोर के निरंकुश शासन से मुक्ति आन्दोलन चला रही थी। त्रिवेन्द्रम की जनता भी उत्तरदायी शासन प्राप्त करने के लिए हर प्रकार के बलिदान के लिए तैयार थी। ''तानाशाही... नहीं चलेगी।'' ''भारत माता की जय'', ''वन्दे मातरम्'' आदि गगनभेदी नारों से आकाश गूंज रहा था। तभी छोटे–छोटे बालकों की एक टोली नारे लगाती हुई दिखाई पड़ी। तिरंगा हाथ में लिए इस टोली का नेतृत्व राजेन्द्र नीलकंठ ही कर रहा था। यह टोली भीड़ को चीरती हुई सबसे आगे आकर बैठ गई।

राज्य की सशस्त्र सेना ने सभा को भंग करने का आदेश दिया। लेकिन आज तो लोग सर पर कफन बांधे बैठे थे। किसी ने भी एक न सुनी। तभी सेना ने गोली वर्षा

आरम्भ कर दी। अनेक लोगों ने घटनास्थल पर ही दम तोड़ दिया। बालकों में केवल राजेन्द्र को ही गोली लगी क्यों कि जोश में आकर वह खड़ा हो गया था। राजेन्द्र घायल हो गया। उसे अस्पताल में भर्ती कर दिया गया।

इधर राजेन्द्र नीलकंठ अस्पताल में जीवन–मृत्यु से संघर्ष कर रहा था, उधर भारत को स्वतंत्र करने की घोषणा हो चुकी थी। १५ अगस्त, १९४७ को सत्ता हस्तांतरण की तैयारी चल रही थी। राजेन्द्र नीलकंठ ने स्वतंत्रता के लगभग एक महीने बाद ही अस्पताल में शहादत प्राप्त कर ली।

दीप प्रज्ज्वलन

अतिथि उद्बोधन

अतिथि उद्बोधन

देवपुत्र गौरव सम्मान राजा चौरसिया को

केन्द्रीय मंत्री श्री प्रह्लाद सिंह पटेल ने किया सम्मानित

श्रोतागण

देवपुत्र गौरव सम्मान

राष्ट्रगान

इंदौर। " बच्चों के लिए लेखन करने वाले बाल साहित्यकारों में बच्चों जैसी सरलता होना आवश्यक है। हमारी उम्र भले ही कितनी भी हो जाए लेकिन हमें अपने भीतर के बच्चे को सदैव जीवित रखना चाहिए।" यह बात 75 वर्षीय बाल साहित्यकार श्री राजा चौरसिया ने अपने सम्मान के प्रत्युत्तर में कही। उन्होंने कहा कि मैं जीवन भर बच्चों के लिए लिखता रहा परंतु पुरस्कारों के लिए की जाने वाली जोड़–तोड़ मुझे आई ही नहीं। मेरी ग्रामीण पृष्ठभूमि मुझे विनम्र तो बनाती है परंतु आधुनिक युग की चाटुकारिता मेरे पास तक नहीं फटक पाती।"

40 वर्षों से निरंतर प्रकाशित हो रही और इंदौर से निकलने वाली बाल पत्रिका देवपुत्र द्वारा प्रदान किया जाने वाला देवपुत्र गौरव सम्मान दिनांक 18 फरवरी 2020 को उमरिया पान कटनी (मध्य प्रदेश) के सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री राजा चौरसिया को प्रदान किया गया। देवपुत्र के द्वारा बाल साहित्य में महत्वपूर्ण अवदान के लिए प्रदान किए जाने वाले इस निजी क्षेत्र के सबसे प्रतिष्ठित सम्मान का यह आठवां समारोह था, जो सायं 5:30 बजे देवपुत्र सभागार संवाद नगर पर संपन्न हुआ। बाल साहित्यकार श्री चौरसिया के सरल व्यक्तित्व का प्रभाव खचाखच भरी श्रोता दीर्घा पर ऐसा पड़ा कि पूरी दीर्घा अपने स्थान पर खड़े होकर उनका मानवंदन करने से अपने आप को नहीं रोक सकी।

समारोह के मुख्य अतिथि केंद्रीय संस्कृति मंत्री श्री प्रहलाद पटेल रहे। इस अवसर पर श्री पटेल ने कहा कि – "बाल साहित्य को लेकर हमारे यहां गंभीरता और जागरूकता की कमी रही है। साहित्य के क्षेत्र में बाल साहित्य उपेक्षित रहा ही है, सरकारी स्तर पर भी इसकी इतनी चिंता नहीं की गई। देवपुत्र के कार्यक्रम में आने के बाद मुझे इस बात का दायित्वबोध हुआ है कि मैं साहित्य अकादमी के नियमित कार्यों के साथ बाल साहित्य को भी प्रोत्साहन देने वाले उपक्रम प्रारंभ करुं। बच्चों को संस्कार देने वाला श्रेष्ठ बाल साहित्य और अधिक मात्रा में प्रकाशित हो और बाल पाठकों तक पहुंचे इसका प्रयास शासन के स्तर पर किया जाएगा।"

श्री पटेल ने इस बात की हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त की कि–" ठेठ ग्रामीण पृष्ठभूमि के एक सीधे सरल रचनाकार को मुझे सम्मानित करने का अवसर मिला है। मुझे यह जानकर और आनंद हो रहा है कि देवपुत्र गौरव सम्मान अखिल भारतीय स्तर पर दिए जाने वाला गरिमामय सम्मान है जिसमें शाल श्रीफल अभिनंदन पत्र सहित 35हजार रु. की सम्मान निधि अर्पित की जाती है। आधुनिक संचार माध्यमों से दूर–दूर तक कोई संबंध नहीं रखने वाले श्री राजा चौरसिया साइकिल पर घूम–घूम कर बच्चों को बाल साहित्य वितरित भी करते हैं और स्वयं कविता कहानियां भी सुनाते हैं। सरस्वती बाल कल्याण न्यास ने इस छुपे हुए हीरे को खोजकर समाज पर बड़ा उपकार किया है।"

कार्यक्रम के प्रारंभ में न्यास के अध्यक्ष श्री कृष्ण कुमार अस्थाना ने स्वागत उद्‌बोधन दिया। कार्यक्रम का संचालन देवपुत्र के संपादक डॉ विकास दवे ने किया। सरस्वती वंदना श्री गोपाल माहेश्वरी ने प्रस्तुत की। आभार प्रबंध न्यासी श्री राकेश भावसार ने माना।प्रतीक चिन्ह श्री विनोद गुप्ता और श्री आनंद जैन द्वारा प्रदान किए गए।

डाक पंजीयन : एम.पी./आय.डी.सी./६२३/२०१८-२०२०
आर.एन.आय. पं. क्रं. ३८५७७/८५
प्रकाशन तिथि २०/०३/२०२०
प्रेषण तिथि ३०/०३/२०२०
प्रेषण स्थल- आर.एम.एस., इन्दौर

- Ranked no. 1 in Indore (M.P.), Ranked no.2 in India's Top Five Girls Boarding school by Education Today 2017.
- Ranked as the 2nd best Girls School in M.P. by Education World Survey.
- "CBSE New Generation School" Certified by CBSE New Delhi.

Swimming Pool of National Standards	Modern sports facilities available
Sprawling Campus	Compulsory Computer Education
Student - Teacher Ratio 1:30	Special remedial and enrichment classes
Extra & competitive exam coaching facility available	Healthy and Nutritious Food
Smart Digital Classrooms	Highly Qualified Faculty
Variety of subjects available for +2 classes	Spacious dormitories with all amenities
Well Equiped Laboratories	Enriched Library

Khandwa Road, Indore (M.P.) 452017, Contact No.: 0731-2877777-66-55
Visit us at: www.queenscollegeindore.org, E-mail: queenscollegeindore@rediffmail.com

सरस्वती बाल कल्याण न्यास, इन्दौर के लिए मुद्रक एवं प्रकाशन कृष्णकुमार अष्ठाना द्वारा टी.एन. ट्रेडर्स, सांवेर रोड, इन्दौर से मुद्रित एवं ४०, संवाद नगर, इन्दौर से प्रकाशित
प्रधान सम्पादक – कृष्णकुमार अष्ठाना